नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

के

विगत ६० वर्षों का सिंहावलोकन

संवत् १९५०–२०१०

निवेदन

हीरक जयंती के अवसर पर सभा के गत साठ वर्षों के इतिहास का सिंहावलोकन करने में विशेष प्रकार के आनंद का अनुभव हो रहा है। एक छोटे प्रारंभ से क्रमशः सभा के वर्तमान विस्तार तक एक मनोरंजक कहानी है। अपने स्वल्प साधनों से अनेक कठिनाइयों का सामना करते-करते, सभा ने अपना वर्तमान रूप ग्रहण किया है। नागरी और हिंदी राज्य तथा जीविकार्थी वर्ग से तिरस्कृत एवं उपेक्षित थी। परंतु इसके पीछे कोटि-कोटि जनता का बल तथा आशीर्वाद था और तपस्वी साहित्यिकों की साधना। इसी शक्ति और संबल को लेकर सभा अपने पथ पर आगे चलती रही है। पिछले साठ वर्षों में देश में अनेक प्रकार के राजनैतिक तथा सांस्कृतिक आंदोलन चलते रहे हैं, जिनकी सभा के ऊपर छाप है और जिन्हें सभा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित भी करती रही है। आज परम संतोष है कि हिंदी भाषा राष्ट्रभाषा स्वीकृत हो चुकी है और इस राज्य तथा शासन से प्रश्रय तथा प्रोत्साहन मिल रहा है। सभा की सफलताएँ और विफलताएँ देश और समाज की सफलताएँ और विफलताएँ हैं। किंतु इस शुभ और पवित्र अवसर पर हम कृतसंकल्प हैं सभा की साहित्यिक परंपरा की रक्षा करने के लिये और इसके भावी संवर्द्धन तथा विकास के लिये।

इस वर्ष के कार्यों में हीरक जयंती समारोह का कार्य प्रमुख रहा है। इसको सफल बनाने में देश के उन्नायकों, साहित्यिकों तथा श्रीमंतों का विशेष हाथ रहा है। सभा की साधारण - सभा, प्रबंध समिति, हीरक जयंती उपसमिति, संयोजक समितियाँ, कार्यालय, मुद्रणालय आदि सभी का पूरा सहयोग इसमें प्राप्त हुआ है। एतदर्थ इन सभी के हम आभारी हैं।

राजबली पांडेय
प्रधान मंत्री

नागरीप्रचारिणी सभा के विगत ६० वर्षों का सिंहावलोकन

१—स्थापना

सभा का बीज-वपन आज से साठ वर्ष पूर्व क्वीस कालीजिएट स्कूल की पाँचवीं कक्षा में पढ़नेवाले कतिपय उत्साही छात्रों ने किया था, जिनका मूल उद्देश्य एक वाद-समिति की स्थापना करना था। उन्होंने स्थिर किया था कि नागरी प्रचार को उद्देश्य बनाकर एक सभा की स्थापना की जाय। और इस निश्चय के अनुसार २७ फाल्गुन, १९४९ (१० मार्च, १८९३) को सभा की स्थापना हुई, जिस का नाम 'नागरीप्रचारिणी सभा' रखा गया। उस समय सर्वश्री गोपालप्रसाद खत्री, रामसूरत मिश्र, उमराव सिंह, शिवकुमार सिंह तथा रामनारायण मिश्र उसके प्रमुख कार्यकर्ता थे।

सभा की लोकप्रियता बढ़ने से उसे छात्रावास से बाहर आ नगर में स्थान ढूँढ़ना पड़ा और श्री जीवनदास जी के एक कमरे में उसे आश्रय मिला। ग्रीष्मावकाश भर सभा का कार्यक्रम स्थगित रहा, परंतु ग्रीष्मावकाश समाप्त होने पर २५ आषाढ़, १९५० वि० (९ जुलाई, सन् १८९३ ई०) को पुनः सब लोग श्री जीवनदास के कमरे में एकत्र हुए। उस दिन श्री गोपालप्रसाद और श्री रामनारायण मिश्र के उद्योग से कई नए सज्जन सभा में पधारे जिनमें श्री श्यामसुंदरदास का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

उस दिन कुछ सज्जनों ने सभा का नाम और कार्य-प्रणाली बदल देने के लिये अपने प्रस्ताव उपस्थित किए, जिन पर बहुत वाद-विवाद हुआ। वाद-विवाद दूसरी बैठक ३२ आषाढ़,१९५० (१६ जुलाई १८९३) में भी चलता रहा। अंत में जो निश्चय हुआ उसका सारांश यह था—

१—सभा का नाम 'नागरीप्रचारिणी सभा' ही रहे।

२—इसके स्थापनकर्ता श्री गोपालप्रसाद माने जायं।

३—उद्देश्य और नियम परिवर्तित तथा परिवर्द्धित किए जायं।

४—सभा का जन्म दिन ३२ आषाढ़, सं० १९५० वि० (१६ जुलाई, १८९३ ई०) माना जाय।

५—श्री श्यामसुंदरदास सभा के मंत्री बनाए जायं।

इसी निश्चय के अनुसार नागरीप्रचारिणी सभा का जन्म ३२ आषाढ़, १९५० वि० (१६ जुलाई, १८९३ ई०) माना जाता है। इससे पहले भी यद्यपि इसका नाम नागरी-प्रचारिणी सभा ही था और हिंदी-हित-साधन के बीज इसमें विद्यमान थे, तथापि उस समय

जीवन पर्यंत सभा की सक्रिय सेवा करते रहे। इस त्रिमूर्ति ने सभा का पालन-पोषण अपनी संतान के समान किया तथा अनेक कठिनाइयों से इसे उबारा। इसीलिये ये तीनों सभा के संस्थापक ही नहीं, पालक और पोषक भी हैं। इसी कारण सभा के संस्थापक होने का श्रेय इस त्रिमूर्ति को ही प्राप्त है।

२—राजभाषा तथा राजलिपि

(१) संयुक्त प्रदेश के न्यायालयों में नागरी

नागरी प्रचार के उद्देश्य से ही इस सभा की स्थापना की गई थी और प्रथम वर्ष से ही इसके प्रत्येक पक्ष पर सभा ने ध्यान देना आरंभ कर दिया था। सन् १८३७ में अँग्रेजी सरकार ने फारसी को सर्वसाधारण के लिये दुरूह मानकर देशी भाषा जारी करने की आज्ञा दी जिसके फलस्वरूप बंगाल में बँगला, उड़ीसा में ओड़िया, गुजरात में गुजराती और महाराष्ट्र में मराठी में काम होने लगा। संयुक्तप्रांत, बिहार और मध्य प्रदेश में 'हिंदुस्तानी' जारी की गई। परंतु उस समय अँग्रेज हाकिमों को अदालती अमलों ने अपनी सुविधा और स्वार्थ-सिद्धि के लिये यह समझा दिया कि उर्दू ही हिंदुस्तानी है और इस प्रकार इन प्रांतों में उर्दू अदालती भाषा हो गई। प्रयत्न करने पर बिहार और मध्य प्रदेश की सरकारों ने सन् १८८१ में इस भ्रम को समझा और अपने यहाँ उर्दू के स्थान पर हिंदी प्रचलित की, पर संयुक्त प्रांत की सरकार ने इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। नागरी-प्रचार के अन्य कार्यों के साथ सभा का ध्यान इस ओर भी गया और उसने इसके लिये उद्योग आरंभ कर दिया। सन् १८८२ में प्रांतीय बोर्ड आव् रेवेन्यू का ध्यान इस बात की ओर आकृष्ट किया गया था कि सन् १८७५ और १८८१ के क्रमशः १९ वें और १२ वें विधानों के अनुसार 'समन' आदि हिंदी और उर्दू दोनों में भरे जाने चाहिएँ। दो वर्ष तक इसका कोई उत्तर नहीं मिला। अतः प्रांतीय सरकार के पास निवेदनपत्र भेजा गया। सन् १८९४ के नवंबर मास (सं० १९५१) में प्रांतीय गवर्नर काशी आने वाले थे। सभा ने उन्हें एक अभिनंदन-पत्र देना निश्चित किया, जिसमें हिंदी भाषा के साथ न्याय करने और सभा की उद्देश्य-पूर्ति में सहायता करने की प्रार्थना की गई थी। किंतु किन्हीं कारणों से उनका आगमन नहीं हो सका, अतएव अभिनंदन-पत्र उनके पास डाक से भेज दिया गया। गवर्नर की ओर से जो उत्तर मिला था उसका आशय था कि—

"गवर्नर महोदय ने अभिनंदनपत्र रुचिपूर्वक पढा। इसमें जिस मुख्य प्रश्न की चर्चा की गई है, अर्थात् अदालती भाषा उर्दू की जगह हिंदी कर दी जाय, उसपर गवर्नर महोदय अपनी कोई संमति अभी प्रकट नहीं कर सकते। फिर भी वे यह अवश्य स्वीकार करते हैं कि सभा की प्रार्थना ध्यानपूर्वक विचार करने योग्य है और वे भविष्य में समुचित अवसर पर उसपर अवश्य विचार करेंगे।"

इन्हीं दिनों रोमन लिपि को दफ्तर की लिपि बनाने का भी कुछ प्रयत्न आरंभ हुआ था। इसपर सभा ने अपने ९ भाद्रपद, सं १९५२ (२५ अगस्त, १८९५) के निश्चयानुसार नागरीलिपि और रोमन अक्षरों के विषय में एक पुस्तिका तैयार करके अँग्रेजी में प्रकाशित की और सरकारी पदाधिकारियों तथा जनता में

फारसी लिपि ही है। इसे ठीक तरह से सीखने के लिये जहाँ कम से कम दो वर्ष चाहिए वहाँ नागरी के लिये महीने दो महीने ही पर्याप्त होते हैं।

सभा के प्रस्ताव के समर्थन मे सयुक्त प्रात के प्राय सब नगरो से सहस्रो हस्ताक्षरो के साथ पत्र पर पत्र गवर्नर महोदय के पास पहुँचने लगे थे। सभा ने अग्रेजी मे 'शुद्ध नागरी बी इट्रोड्यूस्ड इन कोर्टस' नाम की एक पुस्तिका छपवाकर उसकी हजारो प्रतियाँ चारों ओर वितरित कराईं। समाचारपत्रो मे भी खूब आदोलन हुआ। इस प्रकार तीन वर्षों तक निरतर प्रयत्न करते करते सभा को अपने उद्योग मे आशिक सफलता स० १९५७ (सन् १९००) मे प्राप्त हुई। १८ अप्रैल, सन् १९०० को सयुक्त प्रात की सरकार ने इस विषय की जो आज्ञा निकाली उसका आशय था—

(१) सभी अपनी इच्छा के अनुसार नागरी या फारसी लिपि मे लिखकर प्रार्थना-पत्र दे सकते हैं।

(२) सरकारी न्यायालयो के प्रधान अधिकारियो की ओर से जो समन, सूचनापत्र या अन्य प्रकार के कागज पत्रादि प्रकाशित किए जायँगे, वे सब नागरी और फारसी दोनो लिपियो मे छापे जायगे और नागरी अक्षरो मे भी भरे जा सकेंगे।

(३) ऐसे दफ्तरो को छोड़कर जहाँ केवल अँग्रेजी मे काम होता है, हिंदी न जाननेवाला कोई व्यक्ति सरकारी दफ्तरों में नियुक्त न हो सकेगा, और यदि ऐसा कोई व्यक्ति नियुक्त किया जायगा जो, दोनो में से केवल एक भाषा जानता होगा, तो उसे नियुक्ति की तारीख से एक वर्ष के भीतर दूसरी भाषा सीख लेना आवश्यक होगा।

इस विषय की सरकारी आज्ञाओं और वायसराय की सभा मे प्रश्नोत्तरो के हिंदी अनुवाद सभा ने 'पश्चिमोत्तर प्रदेश मे नागरी प्रचार - विषयक लेखसमुच्चय' नामक पुस्तिका मे प्रकाशित कर दिए थे।

नागरी प्रचार के लिए अदालतो में सभा की ओर से वैतनिक लेखक नियुक्त किए गए, जो प्रति वर्ष सहस्रों प्रार्थनापत्र नागरी में लिखते थे। किंतु आर्थिक सहायता के अभाव में बनारस को छोड़ अन्य जिलो मे लेखकों की वैतनिक नियुक्ति सभा के लिये अधिक समय तक सभव न हुई। केवल बनारस की कलक्टरी और जजी मे सभा के दो वैतनिक लेखक सवत् १९७० तक कार्य करते रहे। स० १९७१ मे यहाँ भी एक लेखक कम करना पड़ा। स० १९७४ मे सभा ने वकालतनामे इजरायडिगरी और मेहनताने आदि के फार्म हिंदी मे छपवाकर बिक्री के लिये बनारस की दीवानी कचहरी मे रखे। इनसे भी बहुत सहायता मिली।

सभा का विचार था कि हिंदी जाननेवाले मुहर्रिर तैयार किए जायँ और अरबी फारसी के जिन कठिन शब्दो का प्रयोग अदालतों में होता है और जिनके कारण सर्व साधारण को उर्दू जाननेवाले की शरण लेनी पड़ती है, उनका हिंदी कोश तैयार किया जाय। बनारस के प्रसिद्ध वकील श्री गौरीशकर प्रसाद और उनके मुहर्रिर ब्रह्मचारी विवेकानद ने पहली योजना को सफल बनाने में बहुत सहायता की। उन्होंने हिंदी के मुहर्रिर तैयार करने के लिये अपने यहाँ उनकी कक्षा खोल दी और अपने पास से १०० रु० उसके

प्रारंभिक खर्च के लिये प्रदान करने की भी कृपा की। उनके प्रयत्न से कई सुयोग्य हिंदी मुहर्रिर तैयार हुए जिन्होंने कई अदालतों में वर्षों तक हिंदी का बहुत कार्य किया।

सरल भाषा में कचहरी हिंदी कोश की तैयारी भी आरंभ कर दी गई। यह कार्य सभा के प्रचार मंत्री श्री माधवप्रसाद के अधीन था। इस कोश को तैयार कराने का प्रस्ताव भी उन्होंने ही किया था। यह कोश सं० १९८९ में (प्रस्तावित रूप में) छपकर तैयार हुआ।

सं० १९८४ में सभा ने अदालतों में नागरीलिपि के प्रार्थनापत्रादि देने के संबंध में सभा लाभ सूचनापत्र छपवाकर संयुक्त प्रांत के प्रत्येक जिले में वितरित कराए थे। उसने सं० १९८५ में अपनी यह योजना चलाई कि नागरी में दावे आदि लिखनेवाले मुहर्रिरों को प्रत्येक अर्जीदावे के लिये चार आना तथा प्रत्येक इजरायडिगरी की दरखास्त के लिये दो आना पुरस्कार दिया जाय। इस योजना से भी पर्याप्त सफलता मिली। सं० १९९२ से अर्थाभाव के कारण सभा को यह पुरस्कार-योजना बंद कर देनी पड़ी। किंतु काशी की कचहरी में सभा के वैतनिक लेखक यथापूर्व अपना कार्य करते रहे। आगे चलकर आर्थिक कठिनाई के कारण इनको भी हटाना पड़ा।

यद्यपि अर्थाभाव के कारण मुहर्रिरों को पुरस्कार आदि देना और कचहरियों में वैतनिक लेखक नियुक्त करना बंद कर दिया गया किंतु सभा इस ओर से उदासीन न थी। अन्य दूसरे रूपों में उसका एतद्विषयक उद्योग बराबर चल रहा था। संवत् १९९७ में श्री चंद्रबली पांडे ने सभा की ओर से लखनऊ, मेरठ, देहरादून, सहारनपुर, हरद्वार और बरेली आदि स्थानों में हिंदी प्रचार के लिये यात्रा की। उनके प्रयत्न से बरेली की कचहरी में वहाँ के कुछ उत्साही हिंदी-प्रेमियों ने एक हिंदी लेखक की नियुक्ति की। उसके खर्च के लिये सभा ने भी एक वर्ष के लिये ५ रु० मासिक सहायता देना स्वीकार किया था।

संवत् २००४ तक सभा राजकाज में सर्वत्र देवनागरी लिपि और हिंदी भाषा के व्यावहारिक प्रयोग के लिये निरंतर उद्योग करती रही। संवत् २००४ में इस कार्य में उल्लेखनीय सफलता मिली तथा संयुक्त प्रांत (अब उत्तर प्रदेश) की सरकार ने अपनी राजभाषा और राजलिपि का प्रतिष्ठित पद हिंदी और देवनागरी को देना स्वीकार किया।

(२) केंद्र की राजभाषा तथा राजलिपि

संवत् २००५ तक केंद्रीय सरकार अपनी राजभाषा और राजलिपि का प्रश्न हल नहीं कर सकी थी। इसी वर्ष भारतीय संविधान सभा के आधे से अधिक सदस्यों ने हिंदी और नागरी के समर्थन में अपने लिखित विचार केंद्रीय सरकार के समक्ष उपस्थित किए थे। इस सभा के तत्वावधान में हिंदी-प्रेमियों की एक बहुत बड़ी सार्वजनिक सभा इसी वर्ष २० ज्येष्ठ को हुई, जिसमें निम्नलिखित प्रस्ताव सर्वसंमति से स्वीकार किए गए—

(१) काशी के नागरिकों, साहित्यसेवियों तथा पत्रकारों की यह सभा भारत सरकार की हिंदी तथा नागरी लिपि संबंधी नीति के संबंध में चिंता प्रकट करती है। सरकार की तद्विषयक नीति के संबंध में जो प्रवाद देश में फैल रहा है उससे हिंदी-प्रेमियों के मन में क्षोभ उत्पन्न हो गया है। सभा का भारत सरकार से अनुरोध है कि वह हिंदी के

संबंध मे अपनी नीति स्पष्ट कर दे। सभा का यह निश्चित मत है कि विधान की भाषा नागरी लिपि मे लिखी जानेवाली हिंदी ही हो सकती है, क्योंकि भारत की अन्य प्रांतीय भाषाओं के वही निकटतम है। इसलिये सभा का अनुरोध है कि भारत सरकार नागरी और हिंदी को ही भारत की राजभाषा तथा राष्ट्रभाषा घोषित करे।

(२) काशी के नागरिकों, साहित्यसेवियों तथा पत्रकारों की यह सभा देश के सभी हिंदी प्रेमियों, साहित्य संस्थाओं एवं अन्य जनता से अनुरोध करती है कि हिंदी को विधान की भाषा एवं राजभाषा का तथा नागरी को राजलिपि का रूप देने के लिये प्रबल आंदोलन करे और जिस समय विधान परिषद् की बैठक विधान पर विचार करने के लिये हो, उस समय एक संघटित शांतिपूर्ण प्रदर्शन का आयोजन करे तथा देश के कोने कोने से दिल्ली में प्रदर्शनकारी एकत्र हों। यह प्रदर्शन उस समय तक जारी रहे जब तक देवनागरी लिपि में लिखित हिंदी विधान की भाषा और राजभाषा घोषित न हो जाय। सभा यह भी निश्चय करती है कि इस प्रदर्शन मे योग देने के लिये काशी की ओर से एक जत्था भेजा जाय।

ये प्रस्ताव पं० जवाहरलाल नेहरू, मौ० अबुलकलाम आजाद, डा० राजेंद्रप्रसाद एवं सरदार वल्लभभाई पटेल के पास अविलंब भेज दिए गए। इनका समर्थन सभा की प्रायः समस्त संबद्ध संस्थाओं तथा इतर भाषा संबंधी संस्थाओं ने भी किया।

किंतु फिर भी यह प्रश्न लगातार टलता चल रहा था। संवत् २००५ में सभा ने समय समय पर अनेक वक्तव्य प्रकाशित करके अन्यान्य संस्थाओं तथा व्यक्तियों को इस समस्या के प्रति जागरूक बनाया। श्रद्धेय डा० भगवानदास तथा श्री डा० सुनीति कुमार चाटुर्ज्या ने अँग्रेजी के प्रायः सभी प्रमुख पत्रों में इसकी चर्चा की। अंततः विशाल और प्रबल लोकमत की विजय हुई तथा देवनागरी लिपि में लिखी जानेवाली हिंदी को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित कर दिया गया। आज से ६० वर्ष पहले जिन संकल्पों के साथ इस सभा ने जन्म लिया था, उनमें से एक मुख्य संकल्प इस वर्ष पूरा हो गया।

इस प्रकार हिंदी और नागरी राजभाषा तथा राजलिपि घोषित तो कर दी गई, किंतु प्रतिगामी शक्तियाँ बहुत दिनों तक भीतर ही भीतर क्रियाशील रहीं। संविधान की भाषा संबंधी कुछ धाराओं की खींचतान कर यह सिद्ध करने की चेष्टा की जाती रही कि उसमे जिस हिंदी 'का उल्लेख है उससे अभिप्राय उस भाषा से नहीं है जो *हिंदी-भाषा-भाषी* प्रांतों मे बोली जाती है। हिंदुस्तानी के समर्थक उसकी ऊलजलूल व्याख्या करके अपना ही पक्ष पुष्ट करने की व्यर्थ चेष्टा करते रहे। किंतु इन सबसे हिंदी की निश्चित गति मे कोई व्याघात नहीं पहुँचा और वह निरंतर अपने मार्ग पर आगे बढ़ती गई। स्कूल-कालेजों तथा विश्वविद्यालयों की परीक्षाओं में हिंदी का अध्ययन करनेवाले विद्यार्थियों की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती गई तथा केवल हिंदी के माध्यम से शिक्षण-परीक्षण की स्वतंत्र व्यवस्था करनेवाली संस्थाओं की परीक्षाएँ भी उत्तरोत्तर लोकप्रिय होती गईं।

३—लिपि संस्कार

समस्त भारतवर्ष के लिये एक लिपि की आवश्यकता का आंदोलन आरंभ में जस्टिस श्री शारदाचरण मित्र ने आरंभ किया था। मित्र म॰

विस्तार-परिषद्" नामक एक संस्था की स्थापना की थी, जिसके तत्वावधान में 'देवनागर' नामक एक पत्र भी वे निकालते थे। नागरीप्रचारिणी सभा भी हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि का प्रचार समान भाव से बहुत दिनों तक करती रही। किंतु ज्यों ज्यों मुद्रण, टंकण, तार, टेलिप्रिंटर इत्यादि भिन्न भिन्न प्रकार के यंत्रों का आविष्कार होता गया, त्यों त्यों देवनागरी लिपि में सुधार और संस्कार करके उसे रोमन लिपि के समान सुविधाजनक रूप देने पर गंभीरता से विचार करना आवश्यक हो गया। हिंदी साहित्य संमेलन के इंदौर अधिवेशन में इस विषय की विशद चर्चा हुई और वहीं इस विषय पर देश के विद्वानों से विचार विनिमय करके विवरण उपस्थित करने के लिये एक उपसमिति संघटित कर दी गई। संमेलन के नागपुरवाले अधिवेशन में इस उपसमिति ने अपनी संमति उपस्थित की। अंतिम स्वीकृति के लिये यह संमति संमेलन की स्थायी समिति में भेजी गई। स्थायी समिति ने जो मंतव्य निश्चित किया उसमें प्रचलित लिपि में मुख्यतः निम्नलिखित परिवर्तन सुझाए गए थे:—

१—'अ' की बारहखड़ी।

२—ह्रस्व एकार तथा ओकार के लिये नए रूपों का निर्धारण।

३—फारसी-अरबी-अँगरेजी आदि के उच्चारण के लिये 'क', 'ल', 'न', रूपों का प्रचलन।

४—'ख' के स्थान पर गुजराती 'ख' का प्रचलन।

५—'भ' तथा 'ध' के रूपों में किंचित परिवर्तन।

संमेलन की लिपि संबंधी योजना में कुल १४ सूत्र थे, किंतु उपर्युक्त पाँच सूत्रों के अतिरिक्त शेष नौ सूत्रों में या तो प्रचारार्थ आए हुए सुधार आदि अग्राह्य ठहराए गए थे अथवा अत्यंत सामान्य कोटि के परिवर्तन थे।

इसके पश्चात् यह प्रश्न धीरे धीरे राष्ट्रव्यापी होता गया। हिंदी भाषा का प्रचार ज्यों ज्यों बढ़ता जा रहा था; देवनागरी लिपि में भी उसी त्वरा से कार्य-संचालन करने की [illegible]ता लाने की ओर विचारकों का ध्यान लगा हुआ था, जिस त्वरा से रोमन लिपि में कार्य-संचालन होता है। भारतीय पत्रकारिता के दो मुख्य स्तंभ—हिंदी तथा मराठी—पूर्ण रूप से आत्म-निर्भर होने में मुख्यतः लिपि की असुविधा के कारण ही सफल नहीं हो रहे थे। न तो नागरी की तार-प्रणाली प्रचलित हुई थी, न टेलिप्रिंटर था, न मोनोटाइप और न लाइनोटाइप। संमेलन की योजना के पश्चात् समय समय पर इस विषय की अनेक नवीन योजनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में निकलती रहीं। इनमें दो प्रकार की योजनाएँ थीं—एक तो वे जो चिंतन और मननपूर्वक निर्धारित की गई थीं, दूसरी वे जिनके पीछे इन गुणों का सर्वथा अभाव था और जो केवल नाम के लिये गढ़ ली गई थीं।

संवत् १९९८ में काशी के अध्यापक श्री भगवानदास सिंहनी ने इस विषय का एक व्याख्यान सभा की 'प्रसाद' व्याख्यानमाला के अंतर्गत दिया था, जिसमें उन्होंने अपनी योजना की विशेषताएँ चित्रों द्वारा समझाई थीं। इस अवसर पर सभा की प्रबंध-समिति के सदस्य तथा इस विषय में रुचि रखनेवाले अन्य विद्वानों को विशेष रूप से आमंत्रित किया गया था। इसके बाद से सभा ने लिपि-समस्या पर गंभीरतापूर्वक विचार आरंभ किया। समय समय पर इसकी चर्चा होती रही। अंततः संवत् २००१ में सभा ने एक लिपि-उप-

समिति का सघटन इस विचार के लिए किया कि वर्तमान युग में नागरी लिपि में सुधार तथा सस्कार आवश्यक है या नही। २४ तथा २५ ज्येष्ठ स० २००२ को इस उपसमिति की बैठकें हुई जिनमे सर्वसमति से निम्नलिखित मतव्य स्थिर किए गए :—

'काशी नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबध समिति ने देवनागरी लिपि के सबंध मे जो निश्चय अपने गत ७ अप्रैल ४५ में किया है उसपर हम लोगों के अधिवेशन ने विचार किया। हम लोग इस विषय मे एक मत हैं कि देवनागरी का बहुसमत जो रूप इस समय प्रचलित है उसमे सुधार और सस्कार आवश्यक है। भारत की अन्यान्य भाषाओ तथा विदेशी भाषाओ की ध्वनियों को भी ठीक ठीक लिपिबद्ध करने मे देवनागरी को सक्षम बना लेने की आवश्यकता है। निम्नलिखित भाषाएँ लिखने के लिये जिन ध्वनियों के सकेत नहीं हैं, उनके लिये नवीन सकेत स्थिर करना आवश्यक है :

क. हिंदी
ख. विभिन्न प्रातीय भाषाएँ
ग' अन्य विदेशी भाषाएँ

हिंदी में ऐसी कई ध्वनियाँ हैं जिनके लिये स्वतत्र चिह्नो का अभाव है। उदाहरणार्थ 'जेहि' आदि मे उच्चरित होनेवाला ह्रस्व एकार। ऐसी समस्त ध्वनियो के लिए स्वतंत्र चिह्नों की आवश्यकता है। इसके अनतर हमे अन्यान्य भारतीय भाषाओ और तदनतर विदेशी भाषाओं की ध्वनियो को भी नागरी मे लेखबद्ध करने का मार्ग निकालना है।

''जहाँ तक केवल हिंदी का सबध है, हमारे मत से केवल उन्ही ध्वनिया के लिये सकेत स्थिर करना आवश्यक है, जिनके सकेत नहीं है। हिंदी के अंतर्गत 'कांग्रेस' 'डाक्टर' आदि विदेशी भाषा के शब्दों का ठीक उच्चारण व्यक्त करने के लिये 'आ' की मात्रा के ऊपर जो अर्द्धचद्राकार चिह्न लगाया जाता है, उसका तथा उसी प्रकार के अन्य चिह्नादि के प्रयोग का समर्थन हम नहीं कर सकते, क्योकि उनकी कोई उपयोगिता उन लोगों के लिये नहीं रह जाती जो वह विदेशी भाषा नहीं जानते।

''यदि देवनागरी लिपि का स्वरूप परिवर्तन किया जाय तो इस बात का ध्यान रखना होगा कि नव-स्थिर रूप निम्नलिखित गुणो से सन्निविष्ट हो।'

क. ध्वनि की परपरा से अनुच्छेद तथा समस्त अक्षरों की रक्षा।
ख. लेखन-सौकर्य
ग. मुद्रण सौकर्य
घ. सकेत की अभ्रमात्मक व्यंजकता
ङ. सौंदर्य

''परंतु हमारी यह धारणा है कि [illegible] परिवर्तन [illegible] लिपि को भी देवनागरी कहना उचित [illegible] हम लोगो ने समस्त मात्राएँ [illegible] किया, परंतु हम इस सामान्य [illegible] नहीं किया कि ह्रस्व [illegible] संस्कार पर अपनी [illegible]

में देश भर के विद्वानों और संस्थाओं का मत भी जान ले, अन्यथा इस प्रयत्न द्वारा अभीष्ट फल की प्राप्ति संभव नहीं है। हम लोगो के विचार से सभा का सर्वप्रथम कर्तव्य यह है कि नागरी लिपि में सुधार और संस्कार संबंधी जितने प्रयत्न अबतक किए गए हैं, वह उन सबका एकत्र संग्रह करके प्रकाशित करे। इसके साथ प्रस्तावना के रूप में एक लेख रहे, जिसमें सुधारों और संस्कारों के कारण तथा आधार एवं प्रत्येक प्रयत्न की विशेषता और न्यूनता भी बताई जाय। अनंतर यदि आवश्यकता हो तो इसे पुस्तिका रूप में छपवाकर देश भर के विद्वानों के पास संमति के लिए भेजा जाय। हिंदी के अतिरिक्त अन्य प्रांतीय भाषाओं में यदि लिपि संबंधी सुधार और संस्कार हुए हों, तो वे भी विचार-सहायतार्थ मँगा लिए जायँ। इन सब प्रयत्नों और संमतियों पर पूर्ण रूप से विचार कर लेने के पश्चात् ही कोई निर्णय करना सभा के लिए उचित होगा।"

उपर्युक्त निश्चय को कार्यान्वित करने के लिये देश के प्रमुख हिंदी पत्रों में यह प्रार्थना प्रकाशित की गई थी कि इस दिशा में कार्य करनेवाले सज्जन और संस्थाएँ अपने अपने प्रयत्न की सूचना और सामग्री सभा की उपसमिति के पास भेजने की कृपा करें।

उपसमिति का दूसरा अधिवेशन ६ श्रावण संवत् २००२ को हुआ। उपसमिति ने निश्चय किया कि:

१. "अभी केवल हिंदी और संस्कृत के लिये उपयुक्त लिपि का ही सुधार किया जाना चाहिए।

२. "पठन-पाठन और लेखन में सरलता लाने का उद्देश्य सिद्ध करने के लिये लिखित और मुद्रित लिपि का रूप एक होना चाहिए।

३. "यद्यपि प्रचलित रीति के अनुसार संयुक्ताक्षरों को ऊपर नीचे लिखने तथा मात्राओं को ऊपर, नीचे, आगे, पीछे लगाने की स्वतंत्रता हस्तलिपि में बरती जा सकती है, तथापि मुद्रण-सौकर्य के लिये यह आवश्यक है कि नागरी लिपि के संयुक्ताक्षर और मात्राएँ दाहिनी ओर बगल में एक ही पंक्ति में लगाई जायँ।"

इसके पश्चात् उपसमिति ने आगत और प्राप्त २२ प्रयत्नों और योजनाओं पर विचार किया। स्वरों और व्यंजनो के संबंध में जो सुझाव और सुधार इनमें दिखाई दिए उनका संक्षेप नीचे दिया जाता है:—

क. स्वरों के संबंध में एक को छोड़कर प्रायः सभी योजनाओं में 'अ' की बारहखड़ी बनाई गई थी।

ख. संयुक्त व्यंजनों को प्रायः एक ही पंक्ति में रखने की विधि स्वीकृत की गई थी।'

"सुधार के इन प्रयत्नों में केवल श्री श्रीनिवास जी का प्रयत्न समिति को विशेष संगत प्रतीत हुआ। इन्होंने समूचे 'अ' की बारहखड़ी नहीं की थी, जो विज्ञान और व्यवहार दोनों की दृष्टि से भ्रामक और अशुद्ध है। उन्होंने 'अ' के असंकेतित अतएव निरर्थक अंश 'उ' के साथ मात्राओं का प्रयोग करके स्वरों का बोध कराया था। ऐसा करने से स्वरों में समानता भी आ गई थी और प्रत्येक स्वर का लिपिगत रूप भी भिन्न हो गया था। इनकी स्वर लिपि में एकमात्रिक ह्रस्व और द्विमात्रिक दीर्घ परंपरा का निर्वाह भी

था। श्री श्रीनिवास जी प्रत्येक वर्ण की खड़ी रेखा (पूर्ण या अपूर्ण) को स्वर की मानते थे और उसके प्रयोग से वर्ण को सस्वर और अप्रयोग से अस्वर समझते थे। इसी प्रकार प्रत्येक वर्ग के प्रथम और तृतीय वर्णों में महाप्राण का कल्पित चिह्न लगाकर द्वितीय और चतुर्थ वर्णों का बोध कराया गया था। पंचम वर्णों की आकृति भी नितात भिन्न नहीं थी, अपने अपने वर्ग के किसी अल्पप्राण वर्ण में अनुस्वार का चिह्न लगाकर उन्हें व्यक्त किया गया था, जैसे 'प' में अनुस्वार का चिह्न '०' लगाकर 'म' होता है।

यद्यपि ये कल्पनाएँ नवीन थीं और प्राचीन रूपों से इनमें पार्थक्य बहुत था, तथापि टाइपराइटर या लाइनोटाइप द्वारा मुद्रण मे इनसे बड़ी सुगमता की संभावना थी। इस संबंध के कतिपय अन्य सुझावों से इनका यह सुझाव सर्वथा सरल और व्यवस्थित था, इसमें संदेह नहीं। इन सुझावो में समिति को दो बातें खटकीं; एक तो महाप्राण का चिह्न इतना सूक्ष्म था कि उसके स्पष्ट न होने से 'भाप' 'बाप' हो जाता था और दूसरे पंचम वर्ण लिखने में अनुस्वार का चिह्न किस अल्पप्राण में जोड़ा जाय, यह अनिश्चित था। श्री श्री-निवास जी से समिति ने अनुरोध किया है कि वे इन दोषों को दूर करने की चेष्टा करें।"

अंत में उपसमिति ने सभा को यह परामर्श दिया कि वह श्री श्रीनिवास जी द्वारा प्रतिसंस्कृत इस लिपि को देश के अधिकारी विद्वानों, विश्वविद्यालयो, साहित्य-संस्थाओं, मुद्रण-कार्यालयों तथा टाइपराइटर और लाइनोटाइप निर्माताओं के पास आलोचना, संमति या समुन्नति की प्रार्थना के साथ भेजकर सबका मत संग्रह करे और अनुकूल मत प्राप्त होने पर इसके प्रचार का उपाय करे।

इस प्रतिसंस्कृत वर्णमाला का स्वरूप निम्नलिखित है—

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] अं अः अँ

क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ

ट ठ ड ढ ण त थ द ध न

प फ ब भ म य र ल व श

ष स ह [illegible] [illegible] [illegible] ळ क्ष श्र ज्ञ

सभा द्वारा प्रस्तावित लिपि-संस्कार जिन सरकारो के पास भेजा गया था उनमें से उत्तर प्रदेश की सरकार ने अपने ३१ जुलाई १९४७ (१५ श्रावण संवत् २००४) की

राजाज्ञा द्वारा आचार्य नरेंद्रदेवजी की अध्यक्षता में एक समिति का संघटन किया। उक्त समिति ने नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रस्तावित प्रतिसंस्कार के सुझावों की परीक्षा की और इस योजना के मुख्य निर्माता श्री श्रीनिवास जी को भी समिति में साक्ष्य के लिये आमंत्रित किया। परंतु श्री श्रीनिवास जी के एकमात्रिक और द्विमात्रिक आदि स्वरों के भेद समिति को मान्य नहीं हुए।

उत्तर प्रदेशीय सरकार द्वारा देवनागरीलिपि—सुधार समिति का संघटन होने के बाद ही विधान परिषद् ने भी संकेतलिपि (शार्टहैंड), टंकण (टाइपराइटिंग) तथा टेलिप्रिंटर आदि समस्याओं पर विचार करने तथा उनके तरीकों में एकरूपता लाने के उद्देश्य से श्री काका कालेलकर की अध्यक्षता में एक समिति का संघटन किया था और उत्तरप्रदेशीय समिति ने उसके मंतव्यों पर भी यथोचित दृष्टि रखते हुए अपना विवरण उपस्थित किया था। लिपि में सुधार और संस्कार का प्रश्न हाथ में लेते समय सभा के समक्ष जो उद्देश्य था उसकी पूर्ति उत्तरप्रदेशीय सरकार की समिति द्वारा और अच्छी तरह से होती देखकर सभा की प्रबंध समिति ने अपने १ पौष २००७ के अधिवेशन में इस विषय पर पुनर्विचार करके यह निश्चय किया कि अभी इस संबंध में तटस्थ नीति बरती जाय।

४—आर्यभाषा पुस्तकालय

अपनी स्थापना के प्रथम वर्ष में ही सभा ने हिंदी का पुस्तकालय स्थापित करने का विचार किया था और धीरे धीरे पुस्तकों का संग्रह भी आरंभ हो गया था। जिन नवयुवक छात्रों ने मिलकर सभा की स्थापना की थी वे आरंभ में एक दूसरे से लेकर कुछ थोड़ी सी पुस्तकें एकत्र कर सके थे। इस पुस्तकालय का नाम 'नागरी-भंडार' रखा गया। १० चैत्र सं० १९५० (२४ मार्च, १८९४) की बैठक में खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर, पटना के स्वामी कुँवर रामदीनसिंह ने अपनी सब पत्रिकाएँ और पुस्तकें सभा को देने दा वचन दिया। पुस्तकालय के लिये यह पहला दान था। धीरे धीरे 'भारतजीवन' पत्र के संपादक तथा भारतजीवन प्रेस के स्वामी श्री रामकृष्ण वर्मा ने अपनी प्रकाशित समस्त पुस्तकें बिना मूल्य स्वीकार किया, इसी प्रकार श्री उमाप्रसाद ने भी अपने यहाँ की सब पुस्तकें देने का वचन दिया, राजा रामपाल सिंह अपना दैनिक पत्र, 'हिंदोस्तान' बिना मूल्य देने लगे तथा श्री बदरी नारायण चौधरी का 'नागरी नीरद', श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' का 'साहित्य सुधानिधि', प्रयाग से निकलने वाला 'प्रयाग समाचार' और जबलपुर का 'शुभचिंतक' बिना मूल्य आने लगे। संवत् १९५३ में श्री राधाकृष्णदास के उद्योग से बंबई के सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास की प्रकाशित हिंदी की ११२ पुस्तकें पुस्तकालय में आ गईं। संवत् १९६३ में सेठजी पुस्तकालय को देखकर बहुत प्रसन्न हुए और पाँच सौ रुपयों की पुस्तकें उसे और प्रदान कीं।

उन दिनों काशी के हनुमान सेमिनरी स्कूल की देखरेख में आर्यभाषा पुस्तकालय नाम पुस्तकालय था जिसमें लगभग दो हजार पुस्तकें थीं और जिसे श्री गदाधरसिंह ने

सं० १९४१ वि० (सन् १८८४ ई०) में मिर्जापुर में स्थापित किया था। मिर्जापुर से अपने स्थानान्तरण के कारण उन्होंने भारत पुस्तकालय मिर्जापुर से बनारस लाने का निश्चय किया और उसका प्रबन्ध बनारस के हनुमान सेमिनरी स्कूल को सौंपा दिया। उचित देखरेख न होने के कारण पुस्तकालय की उन्नति होना तो दूर रहा उलटे अवनति होने लगी। उसकी यह दुर्दशा देख सभा ने ११ भाद्रपद, सवत् १९५१ वि० (२७ अगस्त, १८९४) की बैठक में यह निश्चय किया कि—

"एक प्रस्ताव सभा से मिर्जापुर के बाबू गदाधरसिंह के पास, जो कि अब इटावे में हैं, भेजा जावे कि वे अपनी लायब्रेरी को, जो यहाँ बड़ी दुर्दशा में है, नागरी प्रचारिणी सभा में मिला दें।"

श्री गदाधरसिंह सभा के सदस्य बन चुके थे। सभा का सुप्रबंध देखकर वे विशेष प्रभावित हुए और अपना 'आर्यभाषा पुस्तकालय' सभा के प्रबंध में देने के लिये सहमत हो गए। उनकी शर्तों में मुख्य शर्त यह थी कि सभा के 'नागरी भंडार' और उनके आर्यभाषा पुस्तकालय के संयुक्त 'संग्रह का नाम' 'आर्यभाषा पुस्तकालय' ही रहे। सभा ने इसे स्वीकार कर लिया। अगले वर्ष (सं० १९५४) से आर्यभाषा पुस्तकालय का कार्य नियमित रूप से चल निकला। १७ पौष, १९५४ (१ जनवरी, १८९८) से प्रतिदिन प्रातः और सायं दोनों समय जनता के लिये इसके खुलने का प्रबंध कर दिया गया।

पुस्तकों की सूची का छपना सं० १९५९ में आरंभ हो गया और वह सं० १९६० में छपकर तैयार हो गई जिसका मूल्य २ आना रखा गया। यह सूची पुस्तकों के नामानुक्रम से थी, जिसमें समस्त विषयों की पुस्तकें थीं। १८ भाद्रपद, सं० १९६१ (३ सितंबर, १९०४) की बैठक में निश्चय हुआ कि पुस्तकालय की पुस्तकों की एक सूची विषयक्रम से तैयार की जाय। कई वर्ष तक यह कार्य चलता रहा और प्रयत्न करने पर भी सं० १९९० से पूर्व पूरा न हो सका। पूरी सूची बनकर तैयार हो जाने पर भी अर्थाभाव के कारण वह प्रेस में न दी जा सकी। सं० १९९६ में विषय-क्रम से नवीन रीति के अनुसार संख्या लगाने तथा उनको निर्धारित विषयों में विभक्त करके अलग अलग रखने का कार्य किया गया। आधुनिक रीति से पुस्तकों का वर्गीकरण धन-जन सापेक्ष है और सभा के पास धन का अभाव था। फिर भी सभा ने यह कार्य जैसे तैसे चलाए रखा। नवीन प्रणाली के अनुसार पुस्तकालय की दाशमिक वर्गीकृत नवीन सूची छपने के लिये तैयार तो हो गई पर अनेक कठिनाइयों के कारण छप न सकी। आगे जो पुस्तकें आती गईं उनको भी इस सूची में सम्मिलित करना आवश्यक था। यह कार्य सं० १९९९ में प्राप्त पुस्तकों की सूची सहित सं० २००० के आरंभ में पूरा हुआ।

डेवी की दाशमिक प्रणाली के अनुसार प्रस्तुत पुस्तकालय की उक्त सूची का छपना संवत् २००० में ही आरंभ हो गया था। सवत् २००१ में इसका प्रथम भाग प्रकाशित हो गया जिसमें दर्शनशास्त्र, धर्मशास्त्र, समाजशास्त्र, भाषाशास्त्र, विज्ञान, उपयोगी कला और ललित कला विषय की पुस्तकें आ गईं। तब से लेकर इस समय तक निरंतर प्रयत्न करते रहने पर भी इस सूची का शेषांश, जिसमें साहित्य के [illegible] अधिक आवश्यक विषयों के ग्रंथों का समावेश है, अभी तक मुद्रित

हस्तलिखित ग्रंथों की विवरणात्मक सूची के अभाव में अध्येताओं और अनुशीलन-कर्त्ताओं को, तथा उनकी सहायता करने में सभा के कर्मचारियों को, जो असुविधा और कठिनाई होती रहती थी उसकी ओर भी सभा की दृष्टि थी किंतु कई कारणों से यह का पिछले कई वर्षों से टलता आ रहा था। पिछले १०-१५ वर्षों में शोध और अनुशीलन करनेवालों की संख्या में जिस द्रुत-गति से वृद्धि हुई। उसे देखते हुए हस्तलिखित ग्रंथों की विवरणात्मक सूची तैयार करने का कार्य और आगे टालना उचित प्रतीत नहीं हुआ तथा सवत् २००९ में इसके लिये एक पृथक् कर्मचारी की नियुक्ति करके कार्य आरंभ कर दिया गया। ग्रंथों की रक्षा के लिये संवत् २००९ में ही लोहे की ६ बड़ी आलमारियां ले ली गईं और उनमें समस्त हस्तलिखित ग्रंथ, जिनकी संख्या ४३७९ है, रख दिए गए हैं। संवत् २००९ के अंत तक लगभग ६०० ग्रंथों की सूची तैयार हो गई, जिनमें ग्रंथों का निर्माणकाल, लिपिकाल, ग्रंथकार, पृष्ठ-संख्या आदि के विवरणों के अतिरिक्त यह भी उल्लेख है कि एक ही ग्रंथ की कौन कौन सी विभिन्न प्रतियां पुस्तकालय के अन्यान्य संग्रहों में हैं।

संवत् १९८० में हिंदी के सुप्रसिद्ध विद्वान साहित्य सेवी आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने अपना जुहीवाला समस्त संग्रह पुस्तकालय को प्रदान किया। इसमें २४३४ प्राचीन प्राप्य-अप्राप्य भिन्न-भिन्न भाषाओं के ग्रंथ, मासिक पत्रिकाएँ तथा अलभ्य चित्रों का संग्रह है जो हिंदी के विद्वान साहित्यसेवियों के लिये अत्यंत महत्व की सामग्री है। इस संग्रह में 'सरस्वती' के संपादन-काल में द्विवेदीजी द्वारा संपादित समस्त लेखों की हस्तलिखित प्रतियों, उनपर किये गये द्विवेदीजी के संशोधनों सहित ज्यों की त्यों विद्यमान हैं। संवत् १९८४ में अपने अमूल्य संग्रह से द्विवेदीजी ने पुनः ८७१ पुस्तकें, १५४ पत्रिकाएँ और १४१ पत्रिकाओं की फुटकर संख्याएँ पुस्तकालय को प्रदान कीं। संवत् १९९९ में स्वर्गीय द्विवेदीजी के संग्रह की १५०७ पुस्तकें उनके भागिनेय श्री कमलाकिशोर त्रिपाठी से पुस्तकालय को प्राप्त हुईं। अब इस संग्रह में कुल ४३१८ पुस्तकें हैं।

संवत् १९८९ में स्वर्गीय श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के सुयोग्य पुत्र श्री राधेकृष्णदास ने अपने पूज्य पिता के ग्रंथों का संपूर्ण संग्रह सभा को प्रदान किया, जिसमें ११८९ पुस्तकों तथा पत्रिकाओं के अतिरिक्त सूर बिहारी और नंददास के हस्तलिखित ग्रंथों का भी अच्छा संग्रह है। यह संग्रह भी द्विवेदी संग्रह के समान ही 'रत्नाकर संग्रह' के नाम से पृथक अलमारियों में सजाकर रख दिया गया है। इस संग्रह में ३३८ प्राचीन हस्तलेख हैं जिनमें से कितनों में एक से अधिक ग्रंथ संमिलित हैं।

संवत् १९९८ में श्री रामनारायण मिश्र ने ४१३ पुस्तकों का अपना एक संग्रह (श्रीशरच्चन्द्र शर्मा संग्रह) पुस्तकालय को प्रदान किया। पुस्तकों के अतिरिक्त इसमें पत्रिकाओं का भी संग्रह था। इसके बाद भी मिश्र जी जीवनपर्यंत इस संग्रह के लिये ग्रंथों से सहायता करते रहे और सं० २००९ के अंत में इस संग्रह के पुस्तकों की संख्या १०७३ हो गई। डाक्टर हीरानंद शास्त्री का संग्रह भी इसी वर्ष प्राप्त हुआ। इस संग्रह में १०१२ ग्रंथ हैं, जिनमें २५५ हस्तलिखित पुस्तकें हैं। संवत् २००० में श्री मयाशंकर याज्ञिकजी का यह हस्तलिखित ग्रंथों का सुप्रसिद्ध संग्रह पुस्तकालय को प्राप्त हुआ। याज्ञिकजी का यह संग्रह

हन्दी में विख्यात है। इसकी प्राप्ति के लिए कई संस्थाएँ सचेष्ट थीं। इसमे ११७९ हस्तलिखित ग्रंथ हैं।

पुस्तकालय में सभा के खोज विभाग द्वारा संगृहीत हस्तलिखित पुस्तकों का भी एक संग्रह है, जिसमें लगभग २७०० हस्तलिखित ग्रंथ संगृहीत हैं। पुस्तकालय के ग्रंथो की संख्या प्रतिवर्ष बढती रहती है। संवत् २००० में पुस्तकालय के समस्त विभागों की पुस्तकों का योग लगभग ३०००० था, जो संवत् २००९ के अन्त मे लगभग ३६००० हो गया। पुस्तकालय को जो सरकारी तथा अर्द्धसरकारी सहायता मिलती है, वह इसके महत्व तथा उपयोगिता को देखते हुए नगण्य है।

अपने वार्षिक विवरणो मे सभा सरकार का तथा सर्वसाधारण का ध्यान बराबर स्थानाभाव, चालू प्रबन्ध, साज-सज्जा तथा नवीन ग्रथो को क्रय करने के निमित्त द्रव्य की आवश्यकता की ओर दिलाती रही है जिनकी पूर्त्ति, अन्य किसी स्रोत से अर्थागम न होने के कारण, सभा को अपनी सीमित आय में से करनी पड़ती है। पिछले १०-१५ वर्षो में हिंदी का प्रकाशित साहित्य जिस वेग से अभिवृद्ध हुआ है, उस वेग से पुस्तकालय मे संगृहीत नहीं हो सका, जिसके अभाव में पुस्तकालय के ऐतिहासिक पक्ष की हानि हो रही है, उसका परिहार भविष्य में हो सकेगा या नहीं इसमे सदेह है।

स्थान तथा साज-सज्जा की कमी के कारण पुस्तकालय की व्यवस्था भी मनोनुकूल नही हो पाती, जिससे उसका उपयोग करनेवालो को वाछित सुविधा नहीं मिल पाती। संवत् १९९६ के आसपास जहा वर्ष मे चार छः शोध-छात्र पुस्तकालय से लाभ उठाने आया करते थे, वहा अब २० से भी अधिक अध्येता प्रतिवर्ष आने लगे हैं। पुस्तकालय के प्रातः तथा सायं के नियमित समय के अतिरिक्त दिन में भी अपना कार्य करने की अपेक्षा इन अध्येताओं को होती है, और सभा यथासाध्य उन्हें प्रत्येक प्रकार की सुविधा देने के लिये सदैव प्रस्तुत रहती है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि जनता तथा सरकार दोनो इसके द्वारा की जानेवाली सेवाओं के प्रति आकृष्ट हो और इसके लिये थोड़ी सहायता तथा सुविधा की व्यवस्था कर दें। थोड़ी सी सहायता मिलने पर भी पुस्तकालय अपनी सर्वश्रेष्ठता अवश्य स्थिर रख सकेगा।

पिछले दस वर्षों से पुस्तकालय के नियमित, आजीवन तथा साधारण सदस्यों की संख्या में जिस प्रकार यथेष्ट वृद्धि हुई, उसी प्रकार दैनिक पाठको की संख्या भी उत्तरोत्तर बढ़ती रही है। संवत् २००० के अन्त में पुस्तकालय के १७ आजीवन तथा १६७ साधारण सहायक थे, जिनकी संख्या सं० २००६ के अन्त में क्रमशः ५७ तथा ४५६ हो गई। इसी प्रकार पुस्तकालय से संबद्ध वाचनालय में जहा संवत् २००० में १४० पत्र-पत्रिकाएँ आती थीं वहा संवत् २००६ में २०१ पत्र-पत्रिकाएँ आईं।

सभा के हाल में कबीर, सूर और तुलसी से लेकर आधुनिक युग के प्रतिनिधि साहित्य-निर्माताओ के, समान आकार प्रकार [illegible] ल-चित्रों [illegible]
संग्रह है।

५—हस्तलिखित ग्रंथों की खोज

हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों की व्यवस्थित खोज कराने, उसका विस्तृत विवरण प्रस्तुत करने तथा ग्रंथों के संग्रह और संरक्षण का कार्य सभा संवत् १९५७ (सन् १९००) से कर रही है। इसके पूर्व बंगाल एशियाटिक सोसायटी ने सभा के ही अनुरोध पर कुछ दिनों तक अपनी संस्कृत के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज के साथ, हिंदी के ग्रंथों की खोज का कार्य किया था, जिसके फलस्वरूप ६०० प्राचीन ग्रंथों के विवरण संवत् १९५२ (सन् १९८५) में लिए गए थे; जिनसे हिंदी साहित्य के इतिहास संबंधी अनेक नए तथ्यों का उद्घाटन हुआ। बंगाल एशियाटिक सोसायटी द्वारा खोज का कार्य बंद कर दिए जाने पर सभा ने प्रांतीय सरकार को लिखा कि सरकार यदि खोज के कार्य के लिये कुछ वार्षिक व्यय स्वीकार करे, तो सभा यह महत्त्वपूर्ण कार्य अपने तत्त्वावधान में करा सकती है। सरकार ने सभा की प्रार्थना स्वीकार करते हुए यह कार्य सभा को सौंप दिया और ४००) वार्षिक सहायता निश्चित कर दी।

सभा के दो वर्षों में जो कार्य हुआ उसकी प्रगति से संतुष्ट होकर संवत् १९५९ में सरकार ने वार्षिक सहायता बढ़ाकर ५००) कर दी। आरंभ में यह निश्चय किया गया था कि खोज के कार्य की रिपोर्ट प्रति वर्ष प्रकाशनार्थ सरकार के पास भेजी जाया करेगी। इसी निश्चय के अनुसार संवत् १९५७ (सन् १९००) तथा सं० १९५८ (सन् १९०१) की वार्षिक रिपोर्टें प्रकाशित की गईं। इनकी प्रतियाँ सरकार ने देश-विदेश के अनेक विद्वानों के पास भेजीं, जिनमें से डाक्टर हार्नली, डा० ग्रियर्सन, श्री ग्रिफिथ आदि ने खोज के निरीक्षक श्री श्यामसुंदरदास जी को व्यक्तिगत-रूप से पत्र लिखकर इस कार्य की बड़ी सराहना की।

संवत् १९६२ में श्री श्यामसुंदरदास जी ने खोज-कार्य के संबंध में एक बड़ी उपादेय योजना प्रस्तुत की। हिंदी ग्रंथों की खोज का कार्य तब तक संस्कृत ग्रंथों की खोज की पद्धति के अनुसार हो रहा था और उसकी रिपोर्टें प्रति वर्ष प्रस्तुत की जाया करती थीं। इस पद्धति से जिन बातों का पता एक वर्ष में लगता था, उनमें प्रायः अगले वर्षों की खोज के फलस्वरूप परिवर्तन करना पड़ता था। और जब तक समस्त रिपोर्टें देख न ली जायँ, तब तक वास्तविकता का ठीक ठीक ज्ञान प्राप्त करना अनिश्चित रहता था। यह योजना सरकार ने भी स्वीकृत की और तदनुसार संवत् १९६३ से खोज की रिपोर्टें त्रैवार्षिक प्रकाशित होने लगीं।

संवत् १९६५ के अंत में समयाभाव के कारण श्री श्यामसुंदरदासजी खोज के निरीक्षक पद से पृथक् हो गए और उनके स्थान पर श्री श्यामबिहारी मिश्र निरीक्षक चुने गए। संवत् १९६८ में सरकारी सहायता बंद हो जाने के कारण खोज कार्य संवत् १९७०-७१ में प्रायः बंद रहा। किंतु संवत् १९७१ में सरकार ने पुरानी सहायता मद्धे १२५०) प्रदान किए तथा सं० १९७२ से वार्षिक सहायता ५००) से बढ़ाकर १०००) कर दी।

संवत् १९७६ में खोज कार्य के संबंध में विशेष रूप से विचार करने के लिये श्री श्यामसुंदरदास जी के प्रस्ताव पर एक उपसमिति संघटित की गई, जिसने इस कार्य के सभी पक्षों पर विस्तार के साथ विचार करके अपनी संमति उपस्थित की। इस

संमति के सभी आवश्यक अंश सभा द्वारा प्रकाशित 'हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' के प्रथम भाग और 'हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों की खोज का पिछले ५० वर्षों का परिचयात्मक विवरण' में उद्धृत किए गए हैं। उपसमिति ने मुख्यतः दो बातों पर विशेष जोर दिया था। एक तो जिन जिन प्रांतों में ग्रंथों के मिलने की संभावना हो, उनमें खोज का कार्य जितनी शीघ्रता के साथ किया जा सके, उतनी शीघ्रता के साथ किया जाय; क्योंकि ग्रंथ-स्वामियों की उपेक्षा के कारण न जाने कितने ग्रंथ नष्ट हो गए और निरंतर नष्ट होते जाते हैं; दूसरे, संयुक्त प्रदेश (अब उत्तर प्रदेश) में कार्य के दो विभाग कर दिए जायँ और दो अन्वेषकों द्वारा कार्य कराया जाय। इस निश्चय के अनुसार पंजाब, बिहार, मध्य प्रदेश की सरकारों तथा राजपूताने की रियासतों से प्रार्थना की गई कि वे भी अपने अपने प्रांतों में हस्तलिखित ग्रंथो की खोज के लिये यथोचित सहायता करें। तदनुसार पंजाब सरकार ने सभा को तीन वर्षों तक ५००) वार्षिक सहायता देना स्वीकार किया। बिहार-उड़ीसा की सरकार ने खोज का कार्य अपने यहाँ की यशस्वी संस्था 'बिहार ऐंड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी' को सौंप दिया। पंजाब में लगभग दो वर्षों तक श्री जगद्धर शर्मा गुलेरी के निरीक्षण में कार्य हुआ, जिसकी रिपोर्ट संवत् १९८७ में सभा द्वारा प्रकाशित कर दी गई।

संयुक्त प्रांत की सरकार से भी अनुरोध किया गया कि वह अपनी १०००) की सहायता बढ़ाकर २०००) वार्षिक कर दे। संवत् १९७९ सन् १९२२-२३ में सरकार ने तीन वर्षों के लिये २०००) वार्षिक सहायता देना स्वीकार किया और तब से अब तक यह सहायता बराबर मिल रही है।

हिंदी पुस्तकों की खोज के पहले १२ वर्षों में जिन ग्रंथो का पता लगा था, उनकी सूची (हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों का संक्षिप्त विवरण भाग, १) संवत् १९८० में सभा द्वारा प्रकाशित कर दी गई। इसमें १४५० कवियों और उनके आश्रयदाताओं तथा २७५६ ग्रंथो का उल्लेख था; साथ ही इनके संबध में विशेष जानकारी प्राप्त करने के लिये विभिन्न वर्षों की रिपोर्टों में उनके उल्लेख का स्थान-निर्देश कर दिया गया था।

संवत् १९८७ में दिल्ली के चीफ़ कमिश्नर ने दिल्ली प्रांत में खोज कराने के लिये ५००) की सहायता सभा को दी और लगभग ८ मास तक वहाँ कार्य होता रहा, जिसमें २०७ ग्रंथो का पता चला। दिल्ली खोज के निरीक्षक श्री हरिहरनाथ टंडन थे। किंतु समयाभाव के कारण वे खोज की रिपोर्ट तैयार नहीं कर सके। यह कार्य श्री डा० पीतांबरदत्त बड़थ्वाल को करना पड़ा। सभा ने संवत् १९९६ में यह रिपोर्ट भी प्रकाशित कर दी।

श्री श्यामबिहारी मिश्र संवत् १९६६ से लेकर सं० १९७७ तक खोज कार्य का निरीक्षण करने के उपरांत पृथक् हो गए। तदनंतर लगभग एक वर्ष तक श्री शुकदेवबिहारी मिश्र ने यह कार्य संचालित किया। किंतु समयाभाव के कारण उन्हें भी यह कार्य छोड़ देना पड़ा। संवत् १९७६ में पुनः श्री श्यामसुंदरदास जी को निरीक्षक चुना गया। एक वर्ष के उपरांत श्री श्यामसुंदरदास जी पुनः पृथक् हो गए और खोज का निरीक्षण कार्य रायबहादुर डा० हीरालाल जी को सौंपा गया। डा० हीरालाल जी संवत् १९९० तक खोज विभाग का कार्य देखते रहे। उनकी मृत्यु के उपरांत यह कार्य संवत् १९९१ में डाक्टर पीतांबरदत्त बड़थ्वाल को सौंपा गया, जिसे वे संवत् १९९७ तक

संवत् २००२ में खोज का कार्य गोरखपुर में विंध्येश्वरीनारायण चंद्र; इलाहाबाद में लल्लीप्रसाद पांडेय, गाजीपुर में श्री रामनाथ शर्मा एवं श्री भागवतप्रसाद मिश्र की देख-रेख में हुआ। दो अन्वेषक, श्री दौलतराम जुयाल और श्री कृष्णकुमार वाजपेयी ने कुल २०७ ग्रंथों के विवरण के लिए जिनमें ३२ ग्रंथों के रचयिता अज्ञात थे तथा शेष १७५ ग्रंथ २१६ ग्रंथकारों के रचे हुए थे। इनमें काव्य, प्रेमकथा तथा उपदेश और नीति विषयक ग्रंथों की प्रधानता रही। कुछ महत्वपूर्ण ग्रंथ इस प्रकार हैं—हरि चरित्र विराट् पर्व, लेखक ललनसेनि; प्रेम कथानक, लेखक जानकवि (यह बहुत बड़ा संग्रह-ग्रंथ है, जिसमें छोटे बड़े ७० ग्रंथ हैं) लक्ष्मणशतक, लेखक समाधान; सबदी, लेखक चरपटनाथ; वियोग सागर और मोहनी, लेखक शेख अहमद; सत्यनामी संप्रदाय के संतों का बृहत् संग्रह शब्दावली, जैन कवि मुनिमान रचित कविविनोद तथा सखेश्वरदास कृत निर्गुन लीला। गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानस की संवत् १७४९ वि० की लिखी एक प्रति भी इस वर्ष की खोज में प्राप्त हुई।

संवत् २००३ में जौनपुर और सुलतान पुर जिलों में कार्यारंभ किया गया। इलाहाबाद का कार्य श्री दौलतराम जुयाल ने श्री लल्लीप्रसाद पांडेय की देखरेख में तथा गाजीपुर और जौनपुर का कार्य श्री कृष्णकुमार वाजपेयी ने क्रमशः श्री रामनाथ शर्मा तथा श्रीमान् राजा यादवेंद्र दत्त दुबे की देखरेख में किया। जौनपुर जिले का कार्य प्लेग के प्रकोप के कारण जब अधूरा छोड़ देना पड़ा, तब दोनों अन्वेषक सुलतानपुर जिले में श्री गोपालचंद्र सिंह की देखरेख में कार्य करने के लिए भेज दिए गए। श्री दौलतराम जुयाल ने १८४ तथा श्री कृष्णकुमार वाजपेयी ने १३६ ग्रंथों के विवरण लिए, जिनमें ५६ ग्रंथों के रचयिताओं का नाम ज्ञात नहीं हो सका। शेष २६४ ग्रंथ १५९ रचयिताओं के रचे हुए थे। जिन ग्रंथों का रचनाकाल ज्ञात हो सका, वे ११ वीं से लेकर १४ वीं शती तक के थे। अधिकांश रचनाएँ १७ वीं और १९ वीं शती के बीच की थीं। विषय की दृष्टि से सबसे अधिक रचनाएँ काव्य, ज्ञानोपदेश, नीति, शृंगार, भक्ति तथा वैद्यक संबंधी थीं। उपलब्ध सामग्री की दृष्टि से खोज का कार्य इस वर्ष यथेष्ट सफल रहा—अनेक नवीन ग्रंथकारों तथा अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथों का पता चला।

हस्तलिखित ग्रंथों की खोज के अंतर्गत उन महत्वपूर्ण ग्रंथों के विवरण लेने की परंपरा रही है, जो भारत में मुद्रणयुग के आरंभिक चरण (संवत् १९३७ तक) में छपी थीं। इस वर्ष ऐसी कई पुस्तकें प्राप्त हुईं, जिनसे मुद्रणयुग के इतिहास, तत्कालीन शिक्षा [illegible], लोकरुचि आदि बातों पर यथेष्ट प्रकाश पड़ता है।

संवत् २००४ में तीन मास तक सुलतानपुर जिले में कार्य करने के उपरांत दोनों अन्वेषक संवत् २००१-०३ की त्रैवार्षिक रिपोर्ट तैयार करने के लिए काशी बुला लिये गए। खोज की रिपोर्टें आरंभ से ही ‘अंगरेजी में छपा करती थीं। ऐसी व्यवस्था मुख्यतः अंगरेजी शासन के कारण करनी पड़ती थी। हिंदी ग्रंथों की खोज का विवरण अंगरेजी में होने के कारण उन अध्येताओं को बड़ी कठिनाई उठानी पड़ती थी, जो अंगरेजी से अनभिज्ञ होते थे। हिंदी न जाननेवाले अंगरेजी के विद्वानों के लिये खोज रिपोर्टों की कोई आवश्यकता न थी। अतएव सरकार से यह आग्रह किया गया कि प्रत्येक दृष्टि से

इन रिपोर्टों का हिंदी में ही प्रकाशन अभीष्ट और उचित हैं। प्रसन्नता की बात हैं कि सरकार ने यह युक्ति-संगत बात स्वीकार कर ली और रिपोर्ट आगे से हिंदी में लिखी जाने लगी। इस वर्ष तक संवत् १९८३–८४–८५ (सन् १९२६–२८) की त्रैवार्षिक रिपोर्ट भी गवर्नमेंट प्रेस में, अप्रकाशित पड़ी हुई थी। उसको शीघ्र छपने की कोई संभावना नहीं थी। अतएव उसे भी हिंदी में भाषांतरित करने के लिए वापस मँगाया गया, किंतु वापस मिलने पर देखा गया कि रिपोर्ट अत्यंत नष्ट भ्रष्ट अवस्था में है। बड़े परिश्रम से उसे ठीक करके उसका हिंदी रूपांतर अगले वर्ष (संवत् २००५ में) गवर्नमेंट प्रेस भेज दिया गया।

संवत् २००४ में तीन मास तक जो कार्य हुआ उसमें १०५ ग्रंथों के विवरण लिए गए, जिनमें १७ ग्रंथों के रचयिता अज्ञात थे तथा शेष ८८ ग्रंथ ७१ ग्रंथकारों द्वारा रचे गए थे। इन ग्रंथकारों में से ३९ व्यक्तियों के रचनाकाल का पता नहीं चला। शेष ३२ ग्रंथकार १७वीं से लेकर २० वीं शती तक के थे। इस वर्ष की खोज में भक्ति विषयक रचनाओं की प्रधानता रही, पर ज्ञानोपदेश, नीति, शृंगार, काव्य आदि विषयों की भी पर्याप्त रचनाएँ प्राप्त हुईं। इस वर्ष की खोज से सत्यनामी ग्रंथ के प्रवर्त्तक स्वामी जगजीवन दास के संबंध में नवीन तथ्यों का पता चला। पिछली रिपोर्टों में इन्हें दादूदयाल का शिष्य कहा गया था, परंतु इस वर्ष की खोज से प्रकट हुआ कि जगजीवनदास जिन्होंने 'सत्यनामी पंथ' के नाम से पंथ चलाया बिसेसरपुरी और बुल्लासाहब के शिष्य थे।

देशकाल की परिवर्त्तित स्थिति के अनुसार खोज कार्य का नए सिरे से पुनः संघटन करने की आवश्यकता पर सभा कुछ दिनों से विचार कर रही थी। इसके निमित्त २०००) की जो वार्षिक सहायता सरकार दिया करती थी, उससे ग्रंथों के क्रय करने, उन्हें संपादित और प्रकाशित करने तथा खोज संबंधी अन्य आवश्यक व्यय करने की तो बात ही दूर रही, अन्वेषकों का वेतन भी सभा पूरा पूरा नहीं दे पाती थी और उसे पर्याप्त व्यय अपनी अन्य आय में से बराबर करना पड़ता था। इन सब कार्यों को सम्यक् रूप से चलाने के निमित्त २५०००) की एककालीन सहायता प्रदान करने तथा २०००) की वार्षिक सहायता को बढ़ाकर ५०००) कर देने के लिये एक आवेदन पत्र इस वर्ष सरकार के पास भेजा गया। इस पर विचार करने में सरकार को एक वर्ष से भी अधिक समय लगा, फिर भी उसने न तो वार्षिक सहायता में कोई वृद्धि की और न किसी प्रकार की एककालीन सहायता ही दी। ग्रंथों को प्रकाशित करने के लिये अवश्य २०००) की सहायता संवत् २००६ में मिली, जो आगे चलकर स्थायी हो गई। खोज कार्य की वास्तविक कठिनाई इससे दूर नहीं हुई और संवत् २००७ में श्री दौलतराम जुयाल के अतिरिक्त इस विभाग के शेष समस्त कार्यकर्ताओं को बाध्य होकर पृथक् कर देना पड़ा।

संवत् २००५ में श्री दौलतराम जुयाल रायबरेली जिले में श्री गोपालचंद्र सिंह की तथा लखनऊ नगर में श्री डा० दीनदयाल गुप्त की देखरेख में कार्य करते रहे। श्री कृष्णकुमार वाजपेयी ने जौनपुर तथा सुलतानपुर जिलों का शेष कार्य श्रीराम उपाध्याय की देख रेख में पूरा करके प्रतापगढ जिले में श्री शीतलाप्रसाद एडवोकेट तथा श्री कुँवर सुरेशसिंह की देखरेख में कार्यारंभ किया। जुयाल जी ने २५२ तथा ५ [illegible] के [illegible]

रण लिए; जिनमें से ५३ ग्रंथों के रचयिता अज्ञात थे तथा शेष ३६४ ग्रंथ २४३ ग्रंथकारों के रचे थे। २१२ ग्रंथों का रचनाकाल ज्ञात नहीं हो सका; शेष ग्रंथ १४ वीं से लेकर २० वीं शती तक के थे। इनमें भक्ति, अध्यात्म तथा, दर्शन, काव्य, साहित्य-शास्त्र तथा ज्ञानोपदेश विषयक महत्त्वपूर्ण ग्रंथों की प्रचुरता रही। इनके अतिरिक्त इतिहास, संत-साहित्य, दर्शन तथा संगीत के भी अनेक नवीन और महत्त्वपूर्ण ग्रंथ मिले। इस वर्ष की खोज में स्वामी चेतनदास रचित प्रसंगपारिजात नामक एक विशेष महत्त्वपूर्ण और विलक्षण ग्रंथ मिला, जिसकी रचना देशवाडी प्राकृत में पिशाच भाषा के सांकेतिक शब्दों के योग से अदना छंदों में हुई है। इसमें स्वामी रामानंद का समस्त जीवनवृत्त दिया हुआ है। रचनाकाल संवत् १५१७ तथा लिपिकाल संवत् १९९९ है। इसकी भाषा यद्यपि हिंदी से भिन्न है, तथापि रामानंद, कबीर, रैदास, खुसरो और पीपा से घनिष्ट संबंध होने के कारण यह खोज के अंतर्गत संमिलित कर ली गई। इस रचना का पूरा विवरण श्रीबलदेव उपाध्याय ने अपने भागवत संप्रदाय नामक ग्रंथ में दिया है।

संवत् २००६ में श्री दौलतराम जुयाल ने श्री डा० दीनदयालु गुप्त की देखरेख में रायबरेली तथा लखनऊ जिलों में कार्य किया तथा श्रीकृष्णकुमार वाजपेयी ने प्रतापगढ़ और बस्ती जिलों में क्रमश; श्री शीतलाप्रसाद ऐडवोकेट और श्रीपति शर्मा की देखरेख में कार्य किया। इस वर्ष प्रतापगढ़ जिले का कार्य समाप्त हो गया। श्री दौलतराम जुयाल ने २४६ तथा श्री कृष्णकुमार वाजपेयी ने २०७ ग्रंथों के विवरण लिए, जिनमें से ४३ ग्रंथों के रचयिता अज्ञात थे तथा शेष ४१० ग्रंथ ३२० ग्रंथकारों के रचे थे। २१० ग्रंथों का रचनाकाल ज्ञात नहीं हुआ। शेष ग्रंथ १४ वीं शती से लेकर २० वीं शती तक के थे, जिनमें १७ वीं से लेकर १६ वीं शती तक के ग्रंथों का परिमाण सर्वाधिक रहा। इस वर्ष की खोज में विशुद्ध साहित्य कोटि में परिगणित होनेवाले महत्त्वपूर्ण ग्रंथों की प्रधानता रही। कई ऐसे ग्रंथ भी मिले, जिनमें मध्यकालीन ऐतिहासिक वृत्तों का संग्रह है। इनके अतिरिक्त भक्ति, संत-साहित्य, परिचयी (जीवनवृत्त) संबंधी भी उपयोगी रचनाओं के विवरण इस वर्ष लिए गए। इस वर्ष लखनऊ के जिन दो प्रमुख जैन-मंदिरों में खोज का कार्य हुआ, उनमें जैन संप्रदाय के अनेक महत्त्व के धार्मिक तथा साहित्यिक ग्रंथ मिले, जिनसे पता चला कि अधिकांश जैन वाङ्मय का हिंदी भाषांतर बहुत पहले ही हो चुका था। इनमें पद्य के अतिरिक्त गद्य रचनाएँ भी मिली हैं, जो भाषाशास्त्र के अध्ययन के लिये विशेष उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। इस वर्ष सभा के लिये १३२ हस्तलिखित ग्रंथ भी प्राप्त किए गए।

संवत् २००७ में श्री दौलतराम जुयाल ने डा० दीनदयालु गुप्त की देखरेख में रायबरेली तथा लखनऊ जिलों में और श्री कृष्णकुमार वाजपेयी ने श्री श्रीपति शर्मा की देखरेख में बस्ती जिले में कार्य किया। यह कार्य केवल दो मास तक हुआ और १०० ग्रंथों के विवरण लिए गए, जिनमें से ७ ग्रंथों के रचयिता अज्ञात थे तथा शेष ९३ ग्रंथ ६४ ग्रंथकारों के रचे थे। ४४ ग्रंथों का रचनाकाल अज्ञात रहा तथा शेष ग्रंथ १५ वीं से लेकर २० वीं शती तकके थे, जिनमें सर्वाधिक रचनाएँ १८ वीं शती की थीं। विषय की दृष्टि से ज्ञानोपदेश, भक्ति, धर्म, पुराण, कथावार्ता आदि की रचनाएँ अधिक थीं।

संवत् २००८ में भी सं० २००४-०६ की त्रैवार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करने का कार्य श्री दौलतराम जुयाल द्वारा होता रहा। यह रिपोर्ट लगभग १२०० पृष्ठों की हुई। इस त्रैवार्षिक रिपोर्ट के अतिरिक्त अन्वेषक ने निम्नलिखित विवरण और प्रस्तुत किए—

१. संवत् २००१ से २००३ तक की खोज का संक्षिप्त विवरण।
२. सन् १६०० से १९५० तक की खोज का परिचयात्मक विवरण।
३. संवत् २००४ से २००६ तक की खोज का संक्षिप्त विवरण तथा इन तीन वर्षों मे मिले ग्रंथो एवं ग्रंथकारो की सूची।

संवत् १९८३-८५ (सन् १९२६-२८) की त्रैवार्षिक रिपोर्ट का हिंदी रूपातर गवर्नमेंट प्रेस भेजे पर्याप्त समय हो चुका था; किंतु उसके शीघ्र प्रकाशन की कोई सभावना नही दिखाई पड़ी। पिछले पचीस वर्षों के भीतर खोज संबंधी जो कुछ कार्य हुआ था, उसका अत्यंत संक्षिप्त उल्लेख मात्र सभा के वार्षिक विवरणों तथा नागरीप्रचारिणी पत्रिका में हुआ करता था। इस बीच जो सामग्री उपलब्ध हुई थी, वह इतनी महत्त्वपूर्ण थी कि साहित्य और इतिहास का विशेष अध्ययन करनेवाले विद्वान् खोज के पूरे विवरणो को शीघ्र से शीघ्र प्रकाशित देखने के लिये अत्यत उत्सुक थे। फलतः खोज के निरीक्षक श्री डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने उनके प्रकाशन की एक बहुत उपयोगी और व्यावहारिक योजना इस वर्ष प्रबंध समिति के समक्ष उपस्थित की, जिसमें कहा गया था कि यतः गवर्नमेंट प्रेस अपने अन्य कार्यों के कारण खोज रिपोर्ट मुद्रित करने की स्थिति में नहीं है, अतएव सरकार को चाहिए कि पिछले लगभग २५ वर्षों के विवरणों को, विस्तृत रूप में न सही तो किंचित् संक्षिप्त करके, तीन जिल्दो में प्रकाशित करने के लिये सभा को विशेष अनुदान देने की कृपा करे, और सभा उन्हें स्वयं प्रकाशित कर दे। तीनो जिल्दों मे कुल मिलाकर २०७००) के व्यय का अनुमान किया गया था। अपनी २७ दिसंबर १९५२ की राजाज्ञा द्वारा सरकार ने एतदर्थ १००००) का अनुदान स्वीकृत किया। संपूर्ण अनुमित व्यय की स्वीकृति न मिलने के कारण योजनानुसार तीन जिल्दों मे रिपोर्टों का प्रकाशन संभव नहीं प्रतीत हुआ; अतएव उसमें किंचित् परिवर्तन करके उसे ऐसा स्वरूप दे दिया गया, जिसमें प्राप्त अनुदान के भीतर ही खोज के समस्त विशेष आवश्यक और उपादेय अंश आ गए। यह विवरण सभा बहुत तेजी से छाप रही है। आशा है यह शीघ्र ही प्रकाशित हो जायगा और विस्तृत रिपोर्टों के अभाव मे अनुसधायकों को जो कठिनाइयाँ उठानी पड़ती थीं वे दूर हो जायँगी।

संवत् २००९ में श्री दौलतराम जुयाल भाद्रपद मास तक सन् १९४४-१६५० तक के खोज कार्य का संक्षिप्त विवरण तैयार करते रहे। तत्पश्चात् पौष मास तक वे सभा के आर्यभाषा पुस्तकालय में संगृहीत ग्रंथो का विवरण लेते रहे। माघ मास मे वे अपने कार्यक्षेत्र गाजीपुर चले गए और वहाँ श्री गोपालचंद्र सिह की देखरेख में कार्य करते रहे। उन्होंने कुल ३५६ ग्रंथों के विवरण लिए जो १८५ ग्रंथकारों के रचे हुए थे। इनमें २६७ ग्रंथो का रचनाकाल अज्ञात था तथा शेष ग्रंथ १४वीं से लेकर २०वीं शती तक के थे। ज्ञात रचनाकाल वाले ग्रंथों में १४वीं–१५वीं तथा १७वीं–१८वीं शती की रचनाएँ अधिक रहीं। इस वर्ष की खोज में जो ग्रंथ मिले, विषय की दृष्टि से उनमें भक्ति, ज्ञानोपदेश, स्तुति, माहात्म्य

तथा परिचयी (जीवनवृत्त) की प्रधानता रही। ऐसे अनेक मध्यकालीन संतों की रचनाएँ इस वर्ष प्रकाश में आईं जिनका पता खोज में पहले कभी नहीं लगा था।

ऊपर संवत् २००८ के विवरण के अंतर्गत खोज के जिस ५० वर्षीय परिचयात्मक विवरण का उल्लेख हुआ है, वह पहले नागरीप्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ५७ (संवत् २००९), अंक १ में प्रकाशित हुआ था और तदनंतर पृथक् पुस्तकाकार भी प्रकाशित हुआ। इस विवरण के प्रारंभ में खोज विभाग के तत्कालीन निरीक्षक श्री डा० वासुदेवशरण अग्रवाल की प्रस्तावना है, जिसमें खोज कार्य की सांप्रतिक समस्याओं, यथा अनछपे विवरणों को शीघ्र प्रकाशित करने, संगृहीत सामग्री का विद्वानों द्वारा उपयोग किए जाने, न मिल सकनेवाले ग्रंथों की प्रतिलिपि के लिये फोटोस्टैट यंत्र की व्यवस्था होने, ग्रंथ-स्वामियों द्वारा मूल ग्रंथ सुरक्षार्थ सभा को दिए जाने तथा हिंदी क्षेत्र के अन्य भागों में व्यवस्थित खोज की जाने आदि की चर्चा है। विवरण के अंतर्गत आरंभ में खोज विभाग का अब तक का संक्षिप्त इतिहास देकर तत्संबंधी मुख्य मुख्य बातों की चर्चा निम्नलिखित क्रम से की गई है।—

१. स्थापना
२. अध्यक्ष (निरीक्षक) तथा अन्वेषक
३. कहाँ कहाँ खोज हुई
४. व्यय का विवरण
५. प्रकाशित रिपोर्टों का विवरण
६. कितने ग्रंथों के विवरण लिए गए
७. शताब्दी क्रम से ग्रंथों तथा ग्रंथकारों की संख्या
८. सभा के लिये प्राप्त ग्रंथों की संख्या
९. महत्त्वपूर्ण ग्रंथों तथा रचयिताओं का विवरण।

इस परिचयात्मक विवरण के अंत में प्रकाशित तथा अप्रकाशित समस्त खोज रिपोर्टों में आए हुए लगभग ५५० ग्रंथों की सूची रचयिता, रचनाकाल तथा लिपिकाल के साथ देकर रिपोर्टों में उनके उल्लेख का स्थान-निर्देश भी कर दिया गया है। यह सूची बड़ा उपादेय है, किंतु स्थान-संकोच के कारण वह उद्धृत नहीं की जा रही है।

६—प्रकाशन

प्रकाशन के संबंध में सबसे पहले सं० १९५१ में श्री राधाकृष्णदास का यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ था कि हिंदी भाषा के प्रसिद्ध पत्र-संपादकों, ग्रंथकारों तथा लेखकों के जीवन-चरित लिखवा कर प्रकाशित किए जायँ। उसी वर्ष आगे चलकर प्रकाश्य ग्रंथों की एक योजना सभा ने बनाई, जिसके अंतर्गत सर्वप्रथम प्रकाशित होने का श्रेय भी श्री राधाकृष्णदास रचित 'हिंदी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास' को ही मिला। दूसरे वर्ष तो हिंदी व्याकरण और हिंदी कोश की तैयारी का उद्योग भी आरंभ हो गया। तीसरे वर्ष नागरीप्रचारिणी पत्रिका का जन्म हुआ। इस प्रकार सभा प्रतिवर्ष हिंदी साहित्य के निर्माण और प्रकाशन में उत्तरोत्तर आगे ही बढ़ती गई।

(१)—नागरीप्रचारिणी पत्रिका

संवत् १९५३ में पत्रिका का प्रकाशन आरंभ हुआ। इसके प्रथम संपादक श्री श्यामसुंदरदास थे। आरंभ में पत्रिका त्रैमासिक थी और उसमें डिमाई आकार के ६ फर्मे की वाचन सामग्री हुआ करती थी। लेखों का चयन विषयों की उपयोगिता की दृष्टि से किया जाता था, जिसके लिये एक परीक्षक समिति संघटित थी। पत्रिका के पहले वर्ष में परीक्षक समिति के निम्नलिखित सदस्य थे—रायबहादुर श्री लक्ष्मीशंकर मिश्र, श्रीराधाकृष्ण दास, श्री कार्त्तिकप्रसाद, श्री जगन्नाथदास रत्नाकर तथा श्री देवकीनंदन खत्री।

परीक्षक समिति की अनुमति के बिना कोई भी लेख पत्रिका में प्रकाशित नहीं हो सकता था। भाषा के विषय में सभा की तत्कालीन नीति कैसी थी, यह उसके १८ श्रावण सं १९५३ (३.८.१८९६) के निम्नलिखित निश्चय से स्पष्ट होता है—

"सभा की ओर से लिखे हुए जो लेख वा रिपोर्ट आदि प्रकाशित हों, उनमें ठेठ हिंदी के शब्द रहा करें, अर्थात् न बड़े संस्कृत के शब्द हों और न अरबी फारसी भाषाओं के हों। जो लेख सभा द्वारा प्रकाशित होने के लिए कहीं से आवें, उनमें यदि फारसी अरबी के शब्द भरे रहें तो परीक्षक कमेटी उन्हें स्वीकृत न करे।"

पाँचवें वर्ष तक पत्रिका का संपादन श्री श्यामसुंदर दास परीक्षक-समिति के निरीक्षण में करते रहे। छठे वर्ष उन्होंने स्वतंत्र रूप से पत्रिका का संपादन किया। सातवें वर्ष महामहोपाध्याय श्री सुधाकर द्विवेदी उसके संपादक रहे। आठवें वर्ष पुन. श्री श्यामसुंदर दास को ही पत्रिका के संपादन का कार्य सौंपा गया और नवें वर्ष श्री किशोरीलाल गोस्वामी उनके सहायक नियत किए गए। दसवें वर्ष श्री कालिदास ने पत्रिका का संपादन किया और ग्यारहवें वर्ष श्री राधाकृष्णदास।

बारहवें वर्ष अनेक सभासदों के विशेष अनुरोध करने पर सभा ने पत्रिका को त्रैमासिक से मासिक कर दिया, किंतु मूल्य में कोई वृद्धि नहीं की। इस वर्ष से श्री श्यामसुंदरदास को फिर संपादन का कार्य सौंपा गया। तेरहवें वर्ष में भी उन्होंने ही संपादन किया।

चौदहवें वर्ष में पत्रिका के आकार और विषय दोनों में बहुत कुछ परिवर्तन किया गया। अब तक उसमें केवल लेख ही छपते थे और वह डिमाई अठपेजी आकार में निकलती थी, किंतु १० श्रावण सं० १९६६ को सभा की प्रबंधकारिणी ने निश्चय किया कि—

'पत्रिका अधिक रोचक बनाई जाय। उसके १२ पृष्ठ डिमाई चौपेजी आकार में निकाले जायँ, उसमें हिंदी के संबंध के सब समाचारों पर टिप्पणियाँ रहें, सभा के सभासदों में से जो कोई हिंदी की सेवा करे उसका उल्लेख रहे, सभा संबंधी सब समाचार रहें और साथ ही साहित्य संबंधी छोटे छोटे लेख रहें।'

इस निश्चय के अनुसार आश्विन, १९६६ वि० से संपादन का भार श्री रामचंद्र शुक्ल को दिया गया। शुक्ल जी चौदहवें से लगाकर उन्नीसवें वर्ष तक संपादक रहे। अठारहवें वर्ष में श्री रामचंद्र वर्मा उनके सहकारी बनाए गए, जो उन्नीसवें वर्ष तक उनके साथ कार्य करते रहे।

संवत् २००७ में सभी अंक समय पर निकले और पत्रिका का प्रकाशन अद्यतन हो गया। सभा ने निश्चय किया था कि इस वर्ष होनेवाले भारतेंदु जन्मशती महोत्सव के अवसर पर दो अंकों का एक विशेषांक भारतेंदु जन्मशती महोत्सव के अवसर पर दो अंकों का एक विशेषांक भारतेंदु जन्मशती विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया जाय। इस अंक में भारतेंदु जी से संबद्ध प्रायः समस्त विषयों की श्रेष्ठ सामग्री प्रस्तुत करने में अधिकारी विद्वानों का पूरा पूरा सहयोग तत्परतापूर्वक मिला। इसी वर्ष से पत्रिका में विमर्श नाम से एक नया स्तंभ आरंभ किया गया, जिसमें विद्वानों के विशेषतः पत्रिका में प्रकाशित लेखों और मतों पर समीक्षात्मक लेख प्रकाशित होते हैं। इस वर्ष के चौथे अंक से एक संपादन-परामर्श-मंडल की व्यवस्था की गई, जिसके सदस्य निम्नलिखित थे—श्री केशवप्रसाद मिश्र, श्री रायकृष्णदास, श्री डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी तथा श्री डा० वासुदेवशरण अग्रवाल।

संवत् २००७ के अंत में आचार्य केशवप्रसाद जी मिश्र का निधन हो गया। संवत् २००८ में सभा ने निश्चय किया कि इस वर्ष का तृतीय चतुर्थ अंक केशव स्मृति अंक के रूप में प्रकाशित किया जाय। स्व० आचार्य केशवप्रसाद मिश्र भाषाशास्त्र, साहित्य, व्याकरण, दर्शन आदि विषयों के मार्मिक विद्वान एवं सभा के संमानित सदस्य थे। उक्त विशेषांक इसी वर्ष यथेष्ट सफलता के साथ प्रकाशित हुआ।

सं० २०१० में आचार्य डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी तथा श्री कृष्णानंद जी प्रधान संपादक हैं साथ श्री पुरुषोत्तम लाल श्रीवास्तव सहायक संपादक। पत्रिका का यह ५८ वाँ वर्ष चल रहा है। इसके प्रत्येक अंक में औसत से रायल (२० × १६ इंच) अठपेजी आकार के ९६ पृष्ठ रहते हैं। संप्रति इसके स्थायी स्तंभ ये हैं—

१. लेख, जिसमें विभिन्न विषयों पर मुख्यतः शोध संबंधी मौलिक सामग्री होती है;

२. विमर्श, जिसके अंतर्गत (साधारणतः पत्रिका में प्रकाशित लेखों में प्रतिपादित मतों पर समीक्षात्मक विस्तृत टिप्पणियाँ होती हैं;

३. चयन, जिसमें अन्यान्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित साहित्य, इतिहास, आदि संबंधी अत्यंत विशिष्ट सामग्री उद्धृत होती हैं;

४. निर्देश, जिसके अंतर्गत हिंदी तथा अँगरेजी की पत्रिकाओं में प्रकाशित शोध संबंधी लेखों का पूरा परिचय तथा उनमें प्रतिपादित विषयवस्तु की संक्षिप्त सूचना होती है;

५. समीक्षा;

६. विविधि, जिसमें विविध महत्त्वपूर्ण विषयों पर संपादकीय तथा अन्य टिप्पणियाँ रहती हैं; तथा

७. सभा की प्रगति।

(२) हिंदी शब्दसागर

८ ज्येष्ठ सं० १९५१ को श्री राधाकृष्णदास के प्रस्ताव पर सर्वप्रथम सभा ने यह निश्चय किया था कि हिंदी का एक बड़ा कोश तैयार किया जाय। इस निश्चय को कार्या-

न्वित करने के लिये सबसे बड़ी आवश्यकता धन की थी। कई वर्षों तक यह प्रश्न सभा के समक्ष विचाराधीन रहा; किंतु द्रव्य की संतोषजनक व्यवस्था न हो सकने के कारण कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई। तथापि कोश का अभाव निरंतर खटक रहा था और सभा के तत्कालीन सदस्य उसे दूर करने का उपाय ढूँढ निकालने का प्रयत्न बराबर कर रहे थे। २४ भाद्रपद १९५७ के अधिवेशन में रेवरेंड ई० ग्रीव्स ने कोश विषयक प्रश्न सभा की प्रबंध समिति के समक्ष पुनः उपस्थित किया और इसकी पूर्ति के लिये अपने विचार भी प्रकट किए। ग्रीव्स महाशय के सुझाव ऐसे व्यावहारिक थे कि प्रबंध समिति ने तत्काल एक उपसमिति इस विषय पर सलाह और योजना प्रस्तुत करने के लिये संघटित कर दी। इस उपसमिति ने अपनी विस्तृत योजना २३ मार्गशीर्ष १९६४ की प्रबंध समिति के समक्ष प्रस्तुत की। आरंभ में कुल मिलाकर ३००००) व्यय का अनुमान किया गया था। इस कार्य को आरंभ कराने का यश सर सुंदरलाल जी को प्राप्त है। यदि वे आरंभ में १०००) देकर सभा को उत्साहित न करते, तो कदाचित् इस कार्य को आरंभ करना उस समय कठिन हो जाता। आरंभ में यह आशा की गई थी कि ग्रंथों से शब्दों के संग्रह का बहुत कुछ कार्य अवैतनिक लोग करेंगे। पर इसका कोई फल नहीं हुआ। अंत में यह निश्चय किया गया कि कुछ व्यक्ति इस कार्य के लिये वेतन पर नियुक्त किए जायँ। तदनुसार भाद्रपद, १९६६ में यह कार्य आरंभ हुआ। संवत् १९६६ के अंत में १५ व्यक्ति शब्द संग्रह के कार्य पर नियुक्त थे और उन पर ३००) मासिक व्यय होता था। श्री श्यामसुंदरदास इसके प्रधान संपादक बनाए गये। उन्हें इनकी सहायता के लिये सहायक संपादक के रूप में कार्य करने के लिये सर्वश्री बालकृष्ण भट्ट, अमीरसिंह, भगवानदीन और रामचंद्र शुक्ल चुने गये थे।

संवत् १९६७ में शब्द-संग्रह का कार्य समाप्त हो गया। निर्धारित स्थानों के अतिरिक्त अन्य अनेक स्थानों से भी शब्द संगृहीत हुए थे। भिन्न भिन्न व्यापार व्यवसाय आदि पर जो ग्रंथ गवर्नमेंट की ओर से समय समय पर प्रकाशित हुए थे, उन सबको मँगाकर उनमें से भी आवश्यक शब्दों का संकलन किया गया था। अँगरेजी तथा अन्य भाषाओं में जो कोश तब तक प्रकाशित हो चुके थे, उनमें से भी शब्द चुने गए। डिंगल भाषा तथा पुरानी हिंदी के शब्द-संग्रह में श्री देवीप्रसाद तथा श्री भवानीदत्त जोशी से भी सहायता ली गई। जहाँ तक संभव था, शब्दों के संग्रह का पूरा प्रयत्न किया गया था और इस प्रकार शब्दों की कोई १० लाख चिटें (स्लिपें) तैयार की गई थीं।

वैशाख, सं० १९६९ से कोश का छपना आरंभ हुआ। वैशाख और ज्येष्ठ मास में प्रधान संपादक श्री श्यामसुंदरदास ने जो उस समय कार्यवश कश्मीर चले गए थे, काशी में ठहरकर इस कार्य की देखभाल की और जहाँ जहाँ जो सुधार करना आवश्यक जान पड़ा उसका प्रबंध कर दिया। इसके बाद बहुत दिनों तक वे बीमार रहे, फिर भी कोश के कार्य की देखभाल के लिये बराबर कार्यालय आते रहे। उन दिनों को छोड़कर जब वे उठने-बैठने तक में असमर्थ थे, उनका कार्यालय आना एक दिन के लिये भी नहीं छूटा। बीच में बाहर जाने के भी प्रस्ताव आए, पर उनको अस्वीकार करके वे कोश के कार्य के लिये काशी में ही बने रहे।

सवत् १९८१ में कोश के संबंध में एक बड़ी हानिकर दुर्घटना हो गई। कोश विभाग से बहुत सी चिटें चोरी हो गईं। ये चिटें संपादित तथा अ-संपादित सभी प्रकार की थीं। यद्यपि इन शब्दों का संग्रह तथा संपादन दुबारा बड़ी सावधानी से कराया गया फिर भी उनमें कुछ न कुछ त्रुटि रह जाना अनिवार्य था।

संवत् १९८४ में कोश का प्रधान अंश समाप्त हो गया। केवल उन्हीं शब्दों का संग्रह और संपादन शेष रहा, जो किसी कारण छूट गए थे, छपने से रह गए थे अथवा नए प्रचलित हुए थे। यह कार्य भी सं० १९८५ में समाप्त हो गया। छूटे हुए शब्दों का संग्रह और संपादन करने में अवश्य ही आशा से अधिक समय लगा, पर वह अनिवार्य था। इसके अतिरिक्त कोश की प्रस्तावना लिखने में भी बहुत अधिक समय लगा। यह महदनुष्ठान अंततः सवत् १९८५ में संपूर्ण हुआ और पूरा कोश छपकर जनता के हाथों में पहुँच गया।

इस प्रकार संपूर्ण शब्दसागर में सब मिलाकर ९३११५ शब्द और ४२८१ पृष्ठ हैं। इस बृहत् कोश की तैयारी में सं० १९६४ से १९८५ (सन् १९०८ से १९२९) तक लगभग २२ वर्ष लगे और १०८७१९ रु० १४ आ० ६ पा० व्यय हुए।

(३) कोशोत्सव और कोशोत्सव स्मारक संग्रह

इतने बड़े कार्य की सफल समाप्ति पर उत्सव मनाने की इच्छा होना स्वाभाविक था। अतः २५ मार्गशीर्ष संवत् १९८४ (११ दिसंबर, १९२७) को सभा की प्रबंध समिति ने निश्चय किया कि कोश की समाप्ति पर सभा एक विशेष उत्सव का आयोजन करे और उस उत्सव में कोश के संपादकों का यथासाध्य संमान किया जाय, जिन्होंने अपने जीवन का बहुत बड़ा अंश इस कोश को प्रस्तुत करने में व्यतीत किया है। कोश के प्रधान संपादक तथा सहायक संपादकों को एक एक दुशाला, एक एक सोने की जेब घड़ी और एक एक फाउंटेन-पेन भेंट किया जाय। किंतु कोश के प्रधान संपादक श्री श्यामसुंदरदास ने सभा से किसी तरह की भेंट लेना स्वीकार नहीं किया। ऐसी स्थिति में सभा ने निश्चय किया कि कोश के सहायक सपादकों का सत्कार तो उक्त रीति से ही किया जाय और प्रधान संपादक का संमान करने और उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिये 'कोशोत्सव-स्मारक-सग्रह' नाम से एक अभिनदनात्मक लेख संग्रह प्रकाशित किया जाय। महामहोपाध्याय श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा को इसके संपादन का कार्य सौंपा गया। ग्रंथ छपकर तैयार होने पर बड़े समारोह के साथ उत्सव का आयोजन किया गया और ओझा जी के हाथों वसंत पंचमी (२ फाल्गुन) को कोश के प्रधान संपादक श्री श्यामसुंदरदास जी को समर्पित किया गया।

(४) संक्षिप्त हिंदी शब्दसागर

हिंदी शब्दसागर एक वृहत् कोश है। उस समय उसका मूल्य ५०) था। जो लोग इतना मूल्य देकर उसे खरीदने में असमर्थ थे उनके और कालेज के विद्यार्थियों के सुभीते के विचार से संवत् १९८१ में सभा ने इसका संक्षिप्त संस्करण प्रकाशित करने का निश्चय किया था और उसका संपादन श्री रामचंद शुक्ल को सौंपा था। शुक्ल जी शब्दसागर के संपादन

का कार्य तो कर ही रहे थे और उसे दोहराने का कार्य भी उन्ही के हाथ में था, इस कारण वे संक्षिप्त संस्करण का काम अधिक नहीं कर सके। सवत् १९८५ के मध्य तक केवल तृतीयाश का ही संक्षेप प्रस्तुत हो सका। अतः सभा ने संवत् १९८६ न श्री रामचंद्र वर्मा को यह कार्य सौंप कर इसकी शीघ्र समाप्ति का प्रबंध किया। संवत् १९७७ में इसका छपना आरम्भ हो गया। आशा की जाती थी कि १९९८ में पूरा ग्रंथ छपकर तैयार हो जायगा, पर प्रेस की ढिलाई के कारण ऐसा न हो सका, तब तक उसका तीन चौथाई ही छप पाया। हिंदी प्रेमी और विशेषकर विद्यार्थी इस संस्करण के लिये बहुत उत्सुक थे। अस्तु, संवत् १८८६ में संक्षिप्त हिंदी शब्दसागर छपकर तैयार हुआ और १२०० पृष्ठों के इस ग्रंथ की सजिल्द प्रति का मूल्य ४) मात्र रखा गया। यह संस्करण विद्यार्थियों के लिये बड़े ही काम का है। प्राचीन काव्यो तथा आधुनिक गद्य पद्य साहित्य में जो कठिन शब्द मिलते हैं वे इसमें विशेष रूप से दिए गए हैं।

स० १९९३ में इस कोश का दूसरा संस्करण छपा और संवत् १९९६ मे तीसरा।

(५) कोशों का संशोधन

लगभग ३० वर्षों तक हिंदी शब्दसागर तथा संक्षिप्त हिंदी शब्दसागर ज्यों के त्यों छपते रहे। इस बीच हिंदी मे हजारों नए शब्द प्रचलित हुए पूर्व प्रचलित शब्दो के अर्थ मे भी विस्तार तथा सकोच हुआ। अतएव कुछ दिनों से हिंदी प्रेमियों को तथा स्वय सभा को भी इस बात की आवश्यकता प्रतीत होने लगी कि इन दोनो कोशो का संशोधन अपेक्षित है। सवत् १९९७ में संक्षिप्त हिंदी शब्दसागर के चौथे सस्करण के लिये संशोधन का कार्य श्री रामचंद्र वर्मा को सौपा गया। किंतु इसी बीच उसके पुनर्मुद्रण में हाथ लग गया था और बहुत सा अंश पुनर्मुद्रित भी हो चुका था। यह पुनर्मुद्रित संस्करण सं० २००२ के आरंभ में प्रकाशित हुआ। इसके लिये वर्मा जी ने जो संशोधन, परिवर्द्धन किया था, वह परिशिष्ट के रूप मे अंत में संमिलित कर दिया गया। इस संस्करण की ५००० प्रतियाँ छपी थीं जो ३-४ महीने मे ही समाप्त हो गईं, फिर भी इसकी माँग ज्यो की त्यो बनी रही। इस सस्करण मे जो अंश परिशिष्ट के रूप में दिया गया था, अगले संस्करण के लिये वह मूल कोश में यथास्थान सन्निविष्ट कर लिया गया था तथा अनेक नवीन शब्द भी अर्थ सहित बढ़ाए गए थे। किंतु कई अनिवार्य कठिनाइयों के कारण इसकी छपाई की व्यवस्था संवत् २००६ के पूर्व नहीं की जा सकी। मुख्य कठिनाई द्रव्य की थी। संवत् २००६ के अंत में जब सभा ने देखा कि इसका संशोधन ५-७ वर्ष पूर्व होने के कारण इसमें वे सब शब्द नहीं आ पाए हैं, जो इस बीच हिंदी के राज-भाषा स्वीकृत हो जाने के कारण प्रचलित हुए हैं, तो उसने निश्चय किया कि ग्रंथ के अंत में ऐसे समस्त शब्द पुनः परिशिष्ट के रूप मे दे दिए जायँ। इसके लिये सभा ने एक पृथक् वैतनिक कर्मचारी की नियुक्ति की तथा श्री करुणापति त्रिपाठी के निरीक्षण मे परिशिष्ट-संकलन का कार्य आरंभ हुआ। आरंभ में यह अनुमान किया गया था कि इस संस्करण के प्रकाशन में लगभग ३५०००) व्यय होगा। किंतु नवीन सामग्री के कारण कोश

बढ़ गया। इसमें कुल ७४५३५॥=)॥ व्यय हुए, जिसके लिये उत्तरप्रदेशीय सरकार से ३ प्रतिशत सूद पर ३५०००) ऋण लेने पड़े। इस संशोधित और प्रवर्द्धित संस्करण की १०,००० प्रतियाँ छपी थीं। प्रकाशन के पश्चात् कुछ दिनों तक इसकी बिक्री इतनी तेजी से हुई कि नवीन संस्करण की तैयारी करना आवश्यक प्रतीत होने लगा। नवीन शब्दों के संकलन तथा कोश की वर्तमान सामग्री का संशोधनादि संवत् २००६ के आश्विन मास तक बराबर होता रहा। किंतु वर्तमान संस्करण की बिक्री आरंभ में जिस तेजी से हुई थी उसमें उत्तरोत्तर कमी होती गई। आश्विन मास में इसके निरीक्षक श्री डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने अपनी अनिवार्य कठिनाइयों के कारण निरीक्षण कार्य करते रहने में असमर्थता प्रकट कर दी, फलतः प्रबंध समिति ने अपने २५ आश्विन के अधिवेशन में कोश विभाग को विघटित कर दिया।

हिंदी शब्दसागर के संशोधन का कार्य भी संवत् १९९८ में श्रीरामचंद्र वर्मा को सौंपा गया था। उस समय कागज की जैसी स्थिति थी उसमें ऐसी आशा नहीं थी कि साल दो साल में उसका पुनर्मुद्रण हो सकेगा। अतएव इस बीच उसका भी संशोधन करके अगला संस्करण संशोधित रूप में प्रकाशित करने का निश्चय किया गया। कोश के व्युत्पत्तिवाले अंश में जो दोष और भूलें रह गई हैं, उनके सुधार का कार्य श्रीकेशवप्रसाद मिश्र तथा श्रीपद्मनारायण आचार्य को सौंपा गया था। २९ श्रावण संवत् २००० के अधिवेशन में संशोधन कार्य में परामर्श देते रहने के लिये सात सज्जनों की एक परामर्शदात्री उपसमिति सघटित की गई थी, जिसकी संमति के अनुसार यह निश्चय किया गया कि सशोधन कार्य यथासंभव सर्वांगपूर्ण करने के लिये धन का प्रबंध होते ही एक अलग विभाग खोल दिया जाय। वह भी निश्चय किया गया कि कोश की भूमिका के रूप में जो हिंदी साहित्य का इतिहास दिया गया है उसके स्थानपर संशोधित संस्करण में एक लेख हिंदी भाषा के विकास क्रम तथा निरुक्त के संबंध में रखा जाय, क्योंकि कोश का उपयोग करनेवालों के लिये ये ही विषय अधिक उपादेय हैं। श्रीरामचंद्र वर्मा मूल कोश के संशोधन और परिवर्द्धन आदि का कार्य बराबर करते रहे, किंतु व्युत्पत्तिवाले भाग के लिये जो व्यवस्था की गई थी वह यथोचित रूप में आगे नहीं बढ़ी। संवत् २००४ में दो सहायक संपादकों—श्रीवेदमित्र व्रती तथा श्रीरामप्रसाद दुबे की नियुक्ति करके इसके लिये एक पृथक् विभाग की स्थापना कर दी गई। इसी वर्ष उत्तर प्रदेशीय सरकार की ओर से सभा को १००००) की एक विशेष सहायता मिली। सभा ने निश्चय किया कि इस सहायता का उपयोग हिंदी शब्दसागर के संशोधित संस्करण के प्रकाशन में किया जाय, किंतु संवत् २००५ से राजकीय कोश का कार्य सामयिक आवश्यकता के कारण बहुत तेजी से आरंभ हुआ और हिंदी शब्दसागर के संशोधित सस्करण की छपाई में हाथ नहीं लगाया जा सका तथा सरकारी दान का उपयोग संक्षिप्त हिंदी शब्दसागर की छपाई में किया गया।

(६) हिंदी वैज्ञानिक शब्दावली

सभा ने अन्य अनेक उपयोगी ग्रंथों के साथ विज्ञान संबंधी विभिन्न विषयों के ग्रंथ निर्माण कराने का भी विचार सं० १९५१ में किया था। किंतु कई वर्ष तक प्रयत्न करने

पर भी उसे इस कार्य में सफलता नही मिली। इसका मुख्य कारण था विज्ञान के पारिभाषिक शब्दो का हिंदी मे अभाव। अँगरेजी आदि भाषाओं से ऐसे ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद इसी कारण सभव नहीं था। इसलिये सभा ने पहले इसी अभाव की पूर्ति करने का निश्चय किया और स० १९५५ (३१, अक्टूबर, १८९८) में एक उपसमिति इस कार्य के लिये बना दी। इस उपसमिति ने ज्योतिष, रसायन, भौतिक विज्ञान, गणित, वेदात, भूगोल, अर्थशास्त्र आदि के विषयों के शब्द एकत्र किए। फिर उनके हिंदी पर्याय नियत किए गए, उन्हे सात भागों में विभिन्न विषयों के अनुसार नमूने के रूप में छपवाया गया और समति के लिये शिक्षा विभागो के विशेषज्ञ विद्वानों और अन्य अनेक मनीषियों के पास समत्यर्थ भेजा गया। कलकत्ते के विद्वानो से मिलने के लिए श्री श्यामसुदरदास और बबई के विद्वानो के पास श्री माधवराव सप्रे भेजे गए। कलकत्ते मे श्री श्यामसुदरदास ने सर्वश्री जगदीशचद्र बोस, डाक्टर प्रफुल्लचद्र राय और रामेंद्र सुंदर त्रिवेदी से मिलकर परामर्श किया। बंबई में सप्रे जी सर्वश्री टी० के० गजदर, डा० रामकृष्ण गोपाल भंडारकर डाक्टर एम० जी० देशमुख आदि महानुभावों से मिले। इन दोना सज्जनो के लौट आने पर सेंट्रल हिंदू स्कूल म सभा का आयोजन किया गया। ७ आश्विन से १३ आश्विन सं १९५७ तक इसकी बैठके प्रतिदिन दोपहर को १२ बजे से ४॥ बजे तक होती रहीं। इस सभा मे नीचे लिखे विद्वान् समिलित हुए थे—सर्व श्री डा० भगवान्दास, भगवतीसहाय, दुर्गाप्रसाद, गोविददास, खुशीराम, माधवराम सप्रे, रामावतार शर्मा, श्यामसुदरदास, सुधाकर द्विवेदी, वनमाली चक्रवर्ती और विनायक राव।

इन नौ दिनों की बैठका में यह सभा ज्योतिष और भूगोल के सपूर्ण भाग को और गणित के कुछ अश को दुहराकर ठीक कर सकी। कार्य अधिक होने के कारण दर्शन और अर्थशास्त्र के लिये इस सभा ने दो उपसमितियाँ बना दीं, जिनमें दर्शन उपसमिति के सदस्य सर्वश्री डा० भगवानदास, वनमाली चक्रवर्ती, रामावतार शर्मा और इद्रनारायण सिंह तथा अर्थशास्त्र उपसमिति के सर्वश्री गोविददास, माधवराव सप्रे और श्यामसुंदरदास चुने गये। इन दोनो उपसमितियो ने अपना कार्य शीघ्र ही समाप्त कर दिया। ९ पौष से उक्त सभा की बैठकें पुनः आरम्भ हुई और २४ पौष, स० १९६० तक नित्य होती रहीं। इनमें समिलित होनेवाले विद्वान थे—सर्वश्री अभयचरण सान्याल, भगवानदास, भगवतीसहाय, दुर्गाप्रसाद, खुशीराम, एन० बी० रानाडे, रामावतार शर्मा, सुधाकर द्विवेदी, श्यामसुंदरदास, ठाकुरप्रसाद, टी० के० गजदर तथा वनमाली चक्रवर्ती। इस प्रकार गणित का शेष [illegible] और रसायन का पूरा भाग दोहराकर ठीक किए गए। विज्ञान के शब्दों को ठीक करने के लिये सर्वश्री ए० सी० सान्याल, दुर्गाप्रसाद, खुशीराम और एन० बी० रानाडे की उपसमिति बना दो गई। इस उपसमिति ने भी अपना कार्य शीघ्र ही समाप्त कर दिया।

सब शब्दो के दुहराए जाने पर सशोधित कोश के संपादन का कार्य श्री श्यामसुंदर दास के निरीक्षण मे श्री ठाकुरप्रसाद को सौंपा गया और इस कार्य मे सहायता देने के लिये सर्वश्री विनायक राव, खुशीराम, एन० बी० रानडे, [illegible] प्रसाद और भगवानदास चुने गए।

संपादन और छपाई का कार्य साथ साथ चलता रहा। संवत् १९६२ में पूरा कोश छपकर तैयार हो गया। इस कार्य में लगभग आठ वर्ष लगे और कई हजार रुपए व्यय हुए। भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक कोश होने का सर्वप्रथम सौभाग्य नागरीप्रचारिणी सभा के उद्योग से हिंदी को ही प्राप्त है। इस कोश का एक संस्करण कन्नड में प्रकाशित हुआ तथा बँगला, गुजराती और मराठी के कोशों में इसके शब्द संमिलित होने लगे और मद्रास की भाषाओं में जो विज्ञान विषयक ग्रंथ उस समय लिखे गए उनमें इसी कोश से सहायता ली गई। संवत् १९८५ में जब इसकी सब प्रतियाँ समाप्त प्राय हो गईं तब इसके नवीन संस्करण का निश्चय किया गया। इतने वर्षों में वैज्ञानिक शब्दावली में भी बहुत उन्नति हो चुकी थी। प्रत्येक विषय की शब्दावली को तैयार करने का भार अलग अलग विद्वानों को सौंपा गया। प्रत्येक शब्द पर विद्वानों की एक उपसमिति में विचार होता था। उनके निर्णय के अनुसार ही शब्द निर्धारित किए जाते थे। वास्तव में इस नवीन संस्करण में इतने परिवर्तन हुए कि वह एक प्रकार से सर्वथा नया ग्रंथ ही बन गया। इस प्रकार संवत् १९८६ में डाक्टर निहालकरण सेठी द्वारा संकलित भौतिक विज्ञान और प्रोफेसर फूलदेव सहाय वर्मा द्वारा संकलित रसायन शास्त्र प्रकाशित हुए। संवत् १९८७ में गणित विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली और १९८८ में ज्योतिष शास्त्र की पारिभाषिक शब्दावली प्रकाशित की गई। इसके बाद अभी तक और कोई शब्दावली प्रकाशित नहीं हुई।

(७) कचहरी हिंदी कोश

अदालतों में नागरी-प्रचार के सिलसिले में कचहरी में प्रयुक्त होनेवाले शब्दों के हिंदी कोश की आवश्यकता अनुभव की गई और तत्कालीन प्रचार मंत्री श्री माधवप्रसाद के प्रस्ताव पर संवत् १९८३ में सभा ने कचहरी हिंदी कोश तैयार कराने का निश्चय किया। यह कार्य श्री माधवप्रसाद खन्ना को ही सौंपा गया। इसे तैयार करने की योजना इस प्रकार रखी गई थी कि श्री माधवप्रसाद कोश तैयार करते जायँ और संशोधन के उद्देश्य से उसकी छपाई भी आरंभ कर दी जाय। ज्यों ज्यों फार्म छपते जायँ संशोधन के लिये लगभग पचास विद्वानों के पास पहुँचते जायँ और वहाँ से लौटने पर पुनः एक उपसमिति उनपर विचार करे, तब वह संशोधित प्रति छापी जाय। इस विधि से इस कोश में फारसी, अँगरेजी और हिंदी तीन भाषाओं के शब्दों का संकलन बड़े परिश्रम से किया गया। श्री रेवरेंड ई० ग्रीव्स—विलायत से—संशोधन करके इसकी प्रतियां भेजा करते थे। यह कोश संवत् १९८९ में प्रस्तावित रूप में छपकर तैयार हो गया। सभा का विचार था कि एक विद्वत् परिषद् बुलाई जाय, जिसमें प्रांतीय सरकारों और देशी राज्यों के प्रतिनिधि भी निमंत्रित किए जायँ और उस परिषद् के संमुख संशोधन के लिये यह कोश उपस्थित किया जाय, जिससे यह सर्वमान्य हो सके। किंतु यथेष्ठ सहयोग न मिलने के कारण सभा का यह विचार पूरा न हो सका।

(८) राजकीय शब्द कोश

कचहरी हिंदी कोश यद्यपि अंतिम रूप से प्रकाशित नहीं हो सका, तथापि ऐसे कोश का अभाव दिन प्रतिदिन खटक रहा था। हिंदी का प्रचार ज्यों ज्यों अधिकाधिक होता

जा रहा था, त्यों त्यों जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी भाषा और अपनी लिपि का प्रयोग करने में उपयुक्त पारिभाषिक शब्दो का अभाव बहुत बड़ी कठिनाई के रूप में सामने आने लगा था। १००–१५० वर्षों से लगातार अँगरेजी अथवा उर्दू मे कार्य करने के अभ्यासियों को इच्छा होते हुए भी हिंदी का प्रयोग करने में जो बाधा थी, उसे दूर करने का एकमात्र उपाय यही था कि राजकाज में प्रयुक्त होनेवाले अँगरेजी के प्रत्येक पारिभाषिक शब्द के लिये हिंदी का प्रतिशब्द सुलभ कर दिया जाय। संवत् २००० में सभा के कार्याध्यक्ष श्री पं० रामनारायण मिश्र जी कार्यवश जब टेहरी गए थे तब वहाँ के श्री मन्महाराजदेव जी ने भी अपने सभी विभागों में हिंदी-नागरी का प्रयोग किए जाने की इच्छा व्यक्त करते हुए उपयुक्त हिंदी शब्दावली का अभाव दूर करने की चर्चा की और कहा कि यह कार्य सभा को ही अपने हाथ मे लेना चाहिए। उन्होंने १००००) की सहायता भी इस कार्य के लिये देना स्वीकार किया। संवत् २००० में ही उन्होने ५०००) दे दिए। सभा ने इस कोश के प्रणयन की योजना बनाकर कार्य आरंभ कर दिया। सभा ने निश्चय किया था कि योग्य संपादको के एक मंडल के तत्वावधान में एक संपादक, एक सहायक सपादक, सामग्री संग्रह के लिये एक पर्यटक तथा आवश्यकतानुसार अन्य लेखको की नियुक्ति करके एक स्वतंत्र विभाग खोल दिया जाय। आरंभ में अनुमान किया गया था कि इस कोश की तैयारी में लगभग २ वर्ष लगेंगे तथा कुल व्यय लगभग २५०००) होगा। संवत् २००० में इस विभाग का कार्य व्यवस्थित रूप में आरंभ कर दिया गया। श्रीरामचंद्र वर्मा को इसका प्रधान सपादक बनाया गया तथा उनकी सहायता के लिये एक सहायक संपादक तथा दो लेखक नियुक्त कर दिए गए। राजकाज का संबंध प्रायः समस्त विषयो से रहता है। कचहरियाँ तथा कानून यद्यपि उसकी सीमा के भीतर मुख्य विषय रहते हैं, तथापि कल-कारखाने, रेल, तार, डाक, यहाँ तक कि चिकित्सा, वातावरण, जलवायु आदि के शब्दों की आवश्यकता भी राजकाज में प्रायः पड़ती रहती है। इस प्रकार इस कोश का विस्तार बहुत व्यापक था। संवत् २००१ में ही भिन्न भिन्न विषयो के प्रायः २५-२६ कोशो से इसके लिये शब्द-संग्रह किया गया।

इस संबंध में ग्वालियर के श्रीहरिहरनिवास द्विवेदी से सभा को बड़ी सहायता मिलने की आशा थी। वे ग्वालियर में इस विषय का कार्य बहुत दिनों से कर रहे थे और उन्होंने 'शासन-शब्द-संग्रह' नामक एक कोश भी प्रकाशित किया था। इसके अतिरिक्त उन्होंने बहुत से कानूनों और विधान आदि के अनुवाद भी किए थे। अतएव यह उचित समझा गया कि इस प्रकार के कार्यों के लिये दो अलग अलग स्थानों से अलग अलग प्रयत्न न होकर यदि एक ही समिलित प्रयत्न हो तो अधिक उत्तम होगा। उनसे परामर्श करके दोनों योजनाएं एक कर दी गईं और यह निश्चित किया गया कि श्रीरामचंद्र वर्मा तथा श्रीहरिहरनिवास द्विवेदी दोनों सज्जन राजकीय कोश के प्रधान संपादक रहें। संमिलित योजना के अनुसार इस कोश को निम्नलिखित चार भागों में प्रकाशित करना स्वीकार किया गया था—

प्रथम भाग — इसमें हिंदी शब्दों की व्याख्या तथा उनके अँगरेजी प्रतिशब्द रहें साथ ही मराठी, गुजराती एवं बँगला भाषाओं में उनके (हिंदी शब्दों के) प्रयोग की संभावना पर प्रकाश डाला जाय।

द्वितीय भाग इसमें अँगरेजी के शब्द रहें तथा उनकी व्याख्या हिंदी में देकर हिंदी प्रतिशब्द दिए जायँ।

तृतीय भाग इसमें राजकीय व्यवहार में आनेवाले समस्त फार्मों का हिंदी रूप दिया जाए।

चतुर्थ भाग इसमें पाँच परिशिष्ट रखे जायँ। हिंदी-अंगरेजी, अंगरेजी-हिंदी एवं अरबी-फारसी-हिंदी शब्द-सूचियों के तीन परिशिष्ट। चौथा परिशिष्ट स्मृतियों में प्रयुक्त शब्दावली का तथा पाँचवें में छत्रपति शिवाजी का 'राज-व्यवहार-कोश'।

संवत् २००३ में सभा ने शब्द-संग्रह का अपना कार्य लगभग पूरा कर लिया था। 'ए' 'बी' तथा 'सी' के शब्दों का संपादन भी इसी वर्ष हो चुका था, किंतु श्रीहरिहरनिवास द्विवेदी इस वर्ष अन्य कार्यों में व्यस्त रहने के कारण राजकीय कोश का कार्य नहीं कर सके। आगे भी उनसे इस कार्य में कोई सहयोग नहीं प्राप्त हुआ।

सं० २००३ तक सभा का राजकीय कोश विभाग अपना कार्य करता रहा। संवत् २००४ में प्रांतीय सरकार ने हिंदी-नागरी को अपनी राजभाषा तथा राजलिपि स्वीकार कर लिया, किंतु इस विषय की राजाज्ञा में भी हिंदी में कार्य करने में उपयुक्त पारिभाषिक शब्दों के अभाव की कठिनाई स्पष्ट रूप से व्यक्त की गई थी। अतएव सभा ने यह विचार किया कि यदि प्रांतीय सरकार इस कोश का प्रणयन अपने संरक्षण में करावे तो अधिक अच्छा होगा। तदनुसार संवत् २००४ में उसने इस संबंध में प्रांतीय सरकार से लिखा-पढ़ी आरंभ कर दी। सरकार ने इसके संपादन में सहायता देने के लिये रायबरेली के तत्कालीन सिविल जज श्रीगोपालचंद्र सिंह जी को अपनी ओर से सभा में भेज दिया तथा ६०००) की सहायता देना भी कृपापूर्वक स्वीकार किया।

संवत् २००४ तथा २००५ में राजकीय कोश का कार्य बड़ी तत्परता के साथ हुआ। श्री गोपालचंद्र सिंह जैसे विधि-विशेषज्ञ का सहयोग सभा के लिये बड़ा मूल्यवान सिद्ध हुआ। संवत् २००५ के अंत तक लगभग ८००० शब्दों का संकलन तथा उनके हिंदी प्रतिशब्दों का निरूपण हो चुका था। इस कार्य में काशी के अग्रगण्य विद्वानों का सहयोग भी सभा को बराबर मिलता रहा और जो शब्दावली प्रस्तुत हुई, उसकी प्रामाणिकता से प्रांतीय सरकार बड़ी प्रभावित हुई। निम्नलिखित महानुभावों ने इस कार्य में विशेषरूप से सभा को अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया—सर्वश्री केशवप्रसाद मिश्र, महादेव शास्त्री, मूलचंद तिवारी, सुधीरकुमार बसु, कांतानाथ शास्त्री तैलंग, व्रजरत्नदास, विश्वनाथ शास्त्री, कल्गापति त्रिपाठी तथा श्रीनिवास। बड़े कोश के प्रकाशन में विलंब देखकर सभा ने छोटी छोटी विभागीय शब्दावलियों को पहले प्रकाशित कर देना आवश्यक समझा और तदनुसार पुलीस विभाग में प्रयुक्त होनेवाली शब्दावली 'आरक्षिक शब्दावली' के नाम से तथा म्यूनिसिपल बोर्ड एवं डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में प्रयुक्त होनेवाली शब्दावली 'स्थानिक परिषद् शब्दावली' के नाम से पहले ही प्रकाशित कर दी गई। एतदर्थ काशी के प्रसिद्ध दानवीर तथा विद्यानुरागी श्री गौरीशंकर गोयनका से सभा को ११००) की सहायता प्राप्त हुई थी। उक्त शब्दावलियों के अतिरिक्त इस कोश कार्य से संबद्ध 'शब्दार्थ विवेचन', 'भारतीय संविधान के प्रालेख का प्रतिमान' (संविधान के चार पृष्ठों का हिंदी नमूना) आदि

सामग्री भी प्रकाशित करके इस उद्देश्य से प्रचारित की गई, जिसमें हिंदी पर प्रत्यक्ष और परोक्ष-रूप मे होनेवाले आक्रमणों का परिहार हो। इस कार्य में यथेष्ट सफलता मिली।

हिंदी के राजभाषा घोषित कर देने के उपरान्त प्रांतीय सरकार के लिये यह आवश्यक हो गया था कि उसका संपूर्ण कार्य हिंदी में ही हो। अतएव उसके व्यवहार में आनेवाले सभी आकारपत्रों (फार्मो) और विधानों के हिंदी रूप की तुरंत आवश्यकता थी। तात्कालिक आवश्यकता को देखते हुए सभा ने भी इस कार्य पर विशेष ध्यान दिया। संवत् २००५ में मुख्यतः आकारपत्रों एवं विधानो के अनुवाद का कार्य ही पूरी शक्ति के साथ होता रहा। इनमें प्रयुक्त नवीन शब्दो का संकलन भी साथ साथ होता चल रहा था। इस वर्ष के अंत में इस विभाग में नौ व्यक्ति कार्य कर रहे थे। सभा को आशा थी कि यह कार्य पूरा करने के लिये प्रांतीय सरकार पूरी पूरी आर्थिक सहायता प्रदान करेगी किंतु उपर्युक्त ६०००) के अतिरिक्त उसने और कोई अनुदान नहीं दिया। यह कार्य इतना व्ययसाध्य था कि पर्याप्त आर्थिक संरक्षण के अभाव में सभा इसका भार वहन करने में नितांत असमर्थ थी। फलतः संवत् २००६ के १ आश्विन से सभा को बाध्य होकर यह विभाग बंद कर देना पड़ा। इस संबंध के समस्त सरकारी आकार-पत्र आदि एवं अन्य सामग्री जो श्री गोपालचंद्र सिंह के निरीक्षण में संकलित और संपादित हुई थी, सरकार को सौंप दी गई और उसने उनके अनुवाद की व्यवस्था लखनऊ मे ही कर ली।

सरकारी कार्यभार ग्रहण करने के पूर्व सभा ने राजकीय कोश का जितना कार्य किया था उसकी छपाई सं० २००६ में आरंभ हो चुकी थी, किंतु २-३ फर्मे छपने के अनंतर द्रव्याभाव के कारण वह रुक गई और अभी तक रुकी हुई है।

(६) हिंदी व्याकरण

हिदी में एक अच्छे व्याकरण की आवश्यकता सभा ने पहले ही वर्ष अनुभव की थी। दूसरे वर्ष उसके लिये एक स्वर्ण पदक की घोषणा भी की गई, किंतु कोई अच्छा व्याकरण तैयार न हो सका। तब सभा ने व्याकरण संबंधी संदिग्ध विषयों पर भाषातत्वज्ञ विद्वानों की संमति संग्रह करके उसे स्वयं तैयार करने का निश्चय किया। सर्वश्री जगन्नाथदास रत्नाकर श्यामसुंदरदास और किशोरीलाल गोस्वामी को यह कार्य सौंपा गया, पर कोई विशेष फल न हुआ। सं० १९६४ मे सभा ने इस कार्य के लिये ५००) के पुरस्कार की घोषणा की जो सभा द्वारा प्रस्तुत रूपरेखा के आधार पर लिखे गए ग्रंथ पर देना निश्चित हुआ था। किंतु इसका भी कोई विशेष संतोषजनक फल न हुआ। संवत् १९६० में तीन व्याकरण सभा को मिले। इन पर विचार करने के लिये सर्वश्री श्यामसुंदरदास, रामावतार पांडेय, गोविंदनारायण मिश्र, महावीरप्रसाद द्विवेदी, श्यामबिहारी मिश्र, श्रीधर पाठक और लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी की एक उपसमिति बनाई गई। परंतु इस उपसमिति की संमति में इनमे से कोई व्याकरण पुरस्कार के योग्य नहीं ठहरा। सभाने श्री गंगाप्रसाद को, जिनके व्याकरण का एक अंश उत्तम था और श्री रामकरण को, जिनके व्याकरण का दूसरा अंश उत्तम था, क्रमशः १५०) और ५०) पुरस्कार दिए। पीछे इन दोनों व्याकरणों के आधार पर एक सर्वांगपूर्ण व्याकरण तैयार करने का भार श्री कामताप्रसाद गुरु को सौंपा गया। वे इसे सं० १९७६ में पूरा

तैयार कर पाए। सभा की लेख माला में संवत् १९७४ से ही इसका छपना आरंभ हो गया था जो संवत् १९७६ तक बराबर उसी में प्रकाशित होता रहा। पीछे यह पुस्तकाकार प्रकाशित कर दिया गया। इसी को संक्षिप्त करके हाई स्कूल के लिये 'संक्षिप्त हिंदी व्याकरण' का निर्माण हुआ और मिडिल कक्षा के विद्यार्थियों के लिये मध्य हिंदी व्याकरण नाम से एक और संस्करण प्रकाशित किया गया। आरंभिक कक्षाओं के लिये इसका सबसे छोटा संस्करण प्रथम हिंदी व्याकरण भी तैयार हुआ।

(१०) पुस्तक मालाएँ

(क) नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला

सभा ने संवत् १९५७ (सन् १९००) में नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला नाम की एक पुस्तकमाला प्रकाशित करने का निश्चय किया, जिसकी पृष्ठ संख्या ६४ और मूल्य आठ आने रखा गया। वर्ष में इसके चार अंक निकालने का निश्चय हुआ था, जिसके अनुसार उसी वर्ष इसका प्रथम अंक प्रकाशित हो गया। इस अंक के संपादक श्री राधाकृष्णदास थे। संवत् १९७६ तक यह ग्रंथमाला बराबर प्रकाशित होती रही। किसी वर्ष २, किसी वर्ष ३, किसी वर्ष ४ और किसी वर्ष ५ अंक निकलते रहे। इस प्रकार १६ वर्षों में इसके ६४ अंक प्रकाशित हुए।

संवत् १९५७ से ६१ तक इस माला के संपादक श्री राधाकृष्णदास रहे, १९६२ से ६५ तक महामहोपाध्याय श्री सुधाकर द्विवेदी, १९६६ से ६७ तक श्री माधवप्रसाद पाठक और १९६८ से ७६ तक श्री श्यामसुंदरदास। संवत् १९६१ में प्रांतीय सरकार ने पाँच वर्ष के लिये ३००) की वार्षिक सहायता इस ग्रंथमाला को प्रकाशित करने के लिये सभा को प्रदान किया। यह सहायता मिलते ही सभा ने इसकी पृष्ठ संख्या तो ६४ से ८० कर दी, पर मूल्य आठ आने ही रहने दिया।

संवत् १९७६ तक इस ग्रंथमाला में ग्रंथ खंडशः प्रकाशित होते थे। किंतु संवत् १९७७ में निश्चय हुआ कि प्रत्येक प्राचीन ग्रंथ का उत्तम संस्करण प्रकाशित हो, पुस्तकें खंड खंड करके न प्रकाशित की जायँ, प्रत्युत एक एक तुस्तक संपूर्ण छापकर, उत्तम और मजबूत जिल्द बँधवाकर प्रकाशित की जाय। तब से इस ग्रंथमाला में पूरे ग्रंथ प्रकाशित होने लगे और इसका त्रैमासिक पत्रिका के रूप में निकलना बंद हो गया। संवत् १९७९ में अलवर-नरेश ने इस ग्रंथमाला के प्रकाशन के लिये सभा को ५०००) की सहायता प्रदान की। संवत् २००४ से उत्तर प्रदेशीय सरकार एतदर्थ २०००) वार्षिक सहायता बराबर दे रही है। अब तक इसमें ३८ ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं।

(ख) नागरीप्रचारिणी लेखमाला

संवत् १९६६ में यह लेखमाला निकालने का निश्चय किया गया था। इसका वार्षिक मूल्य २) था। इसके सर्वप्रथम संपादक श्री माधवप्रसाद पाठक चुने गए थे। संवत् १९६६ में इसकी तीन संख्याएँ निकलीं।

संवत् १९७७ तक लेखमाला की ३८ संख्याएँ प्रकाशित हुईं और फिर यह बंद हो गई।

(ग) मनोरंजन पुस्तकमाला

सभा ने संवत् १९७० में यह माला निकालने का निश्चय किया। इसमें विविध विषयों के सर्वोत्तम १०० ग्रंथ निकालने की योजना बनाई गई थी। इस योजना के अनुसार ग्रंथों का कागज, जिल्द, आकार और मूल्य सब एक ही रखना निश्चित हुआ। इनकी भाषा और विषय आदि के विषय में कहा गया था कि 'प्रत्येक ग्रंथ की भाषा सरल, मुहावरेदार तथा पुष्ट होगी और पुस्तक के किसी भाग में ऐसी कोई बात न आएगी जो माता अपने पुत्र से, पिता अपनी कन्या से अथवा भाई अपनी बहन से कहने में संकोच करे। इस माला के संपादन का भार श्री श्यामसुंदरदास को सौंपा गया। आरंभ में ही लगभग चालीस चुने हुए विद्वानों ने इसके लिये ग्रंथ लिखने का वचन दिया था। प्रत्येक पुस्तक का मूल्य ।।।) आना रखा गया था। इस माला की सर्वप्रथम पुस्तक श्री रामचंद्र शुक्ल लिखित 'आदर्श जीवन' है जो संवत् १९७१ में प्रकाशित हुई थी। तब से अब तक इसमें ५४ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आजकल इसकी प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १।।) है।

(घ) देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला

जोधपुर निवासी स्वर्गीय मुंशी देवीप्रसाद मुंसिफ ने बंबई बंक के सात हिस्सों के रूप में सभा को सं० १९७५ वि० (सन् १९१८ ई०) में एक निधि इसलिए प्रदान की थी कि उसकी आय से हिंदी में ऐतिहासिक पुस्तकें प्रकाशित की जायँ। सन् १९२१ में ये हिस्से इंपीरियल बंक के सात हिस्सों के रूप में परिवर्तित हुए और इंपीरियल बंक के १४ नए हिस्से भी खरीदे गए। इसकी आय से अब तक कुछ १८ पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

(ङ) सूर्यकुमारी पुस्तकमाला

शाहपुरा के श्रीमान् महाराजकुमार उम्मेद सिंह जी की स्वर्गीया धर्मपत्नी श्रीमती सूर्यकुमारी जी के स्मारक में यह पुस्तकमाला स्थापित की गई है। श्रीमती ने अपने अंतिम समय में अपने एक लाख रुपये मूल्य के आभूषण हिंदी प्रचार के लिये दान किए थे। उन्हीं एक लाख रुपयों के सूद में से श्रीमान् ने सभा को सं० १९७७ से १९८० तक भिन्न भिन्न तिथियों में कुल १९९८४) प्रदान किए, जिनसे यह पुस्तकमाला प्रकाशित की जाती है। यह पुस्तकमाला विशेष रूप से हिंदी का प्रचार करने तथा उसके भांडार को उत्तमोत्तम ग्रंथरत्नों से भरने के उद्देश्य से स्थापित की गई है। अब तक इस माला में २१ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है।

(च) बालाबख्श-राजपूत-चारण-पुस्तकमाला

जयपुर के ग्राम हणूतिया निवासी स्वर्गीय बारहट बालाबख्श ने सं० १९७९-८० में सभा को ७०००) इसलिए दिया था कि वह उसके ब्याज से राजपूतों और चारणों के रची हुई डिंगल और पिंगल भाषा की पुस्तकें प्रकाशित करे। सभा ने इस धन से १००००)

उस दाता का नाम रहा करेगा। पुस्तको की बिक्री आदि से होनेवाली माला की आय भी माला की ही संपुष्टि में लगाई जायगी। इस माला में अब तक दो पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

(ठ) महिला पुस्तकमाला

संवत् १९६१ के माघ मास मे भिनगा के राजा साहब ने सभा को एक पत्र लिखकर स्त्री-शिक्षा की उत्तम पुस्तक तैयार करके प्रकाशित करने के लिये ३००) की सहायता देने की इच्छा प्रकट की थी। सभा ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। इस पुस्तक के संपादन का भार श्री श्यामसुंदरदास को सौंपा गया और उनको इस विषय में परामर्श देने के लिये सर्वश्री रामनारायण मिश्र, राधाकृष्णदास और माधवप्रसाद चुने गए। सं० १९६२ मे यह पुस्तक छपकर प्रकाशित हो गई और इसका नाम 'वनिता-विनोद' रखा गया। इस पुस्तक में विभिन्न बारह लेखकों के स्त्री-शिक्षा-संबंधी सोलह लेख रखे गए थे। इसके प्रकाशित करने मे ५००) व्यय हुए जिनमे ३००) भिनगा नरेश से प्राप्त हुए और शेष सभा ने लगाए। वनिता-विनोद का बहुत आदर हुआ। बँगला मे भी इसका अनुवाद निकला। इससे उत्साहित होकर सभा ने समय समय पर महिलोपयोगी और भी कई पुस्तके प्रकाशित कीं। अब तक इस माला के अंतर्गत सात पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

(ड) अर्द्धशती याज्ञिक ग्रंथावली

सभा की अर्द्धशताब्दी के अवसर पर याज्ञिक बंधुओ (श्री जीवनशंकर याज्ञिक तथा श्री डा० भवानीशंकर याज्ञिक) ने अपने पूज्य पितृव्य श्री मयाशंकर याज्ञिक के हस्त-लिखित ग्रंथों के प्रख्यात संग्रह के साथ १००१) की एक निधि उक्त ग्रंथमाला के प्रकाशन के लिए प्रदान की थी। इस माला मे हस्तलिखित संग्रह के महत्त्व के अप्रकाशित ग्रंथ तथा अन्य उपयोगी ग्रंथ प्रकाशित होगे। अभी तक इस माला मे कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई है।

(ढ) प्रकीर्णक पुस्तकमाला

इस पुस्तकमाला के लिये कोई निधि जमा नहीं है। इस माला की पुस्तके सभा अपने धन से प्रकाशित करती है। इस माला के लिये कोई निर्धारित विषय भी नहीं है। सभा की नीति के अ-विरुद्ध हिंदी की कोई भी उत्कृष्ट पुस्तक इस माला के अंतर्गत प्रकाशित हो सकती है।

(११) अभिनंदन ग्रंथ

(क) द्विवेदी अभिनंदन ग्रंथ

सभा की यह परंपरा आरंभ से ही चली आती है कि वह समय समय पर हिंदी के गण्यमान्य साहित्य-सेवियों और विद्वानों का अभिनंदन करती रही
से दिया गया सबसे पहला अभिनंदन ग्रंथ 'कोशोत्सव स्मारक संग्रह'
कोश' शीर्षक प्रकरण के अंतर्गत ऊपर की जा चुकी है।

दूसरा द्विवेदी 'अभिनंदन ग्रंथ' जो आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के सत्तरवें वर्ष में पदार्पण करने के उपलक्ष्य में दिया गया।

इसके लिये देश विदेश के विद्वान् साहित्यिकों ने अपनी उत्कृष्ट रचनाएँ भेजीं। यहाँ तक कि महात्मा गांधी ने भी इस ग्रंथ के लिये शुभकामना का संदेश भेजा था। सर्वश्री नूट हामूजन (नारवे के नोबुल पुरस्कार विजेता साहित्यिक), सर जार्ज ग्रियर्सन, डाक्टर थियोडोर वैन विंटरस्टीन (जर्मनी के इंडिया इंस्टिट्यूट के संस्थापक और अध्यक्ष) और भाई परमानंद जैसे महानुभावों ने सद्भावना के संदेश भेजे थे।

सभा ने इस ग्रंथ के संपादन का भार सर्वश्री श्यामसुंदरदास और राय कृष्णदास को सौंपा था। उनके संपादकत्व में बड़ी सजधज के साथ यह ग्रंथ प्रकाशित हुआ तथा ११ वैशाख, सं० १९९० (२ मई १९३३ ई०) को आचार्य द्विवेदी जी की ७० वीं वर्षगांठ के अवसर पर महाराज सवाई महेंद्र वीरसिंह जू देव के सभापतित्व में आचार्यवर को समर्पित किया गया। इस अभिनंदन ग्रंथ की सामग्री और साजसज्जा में साहित्य तथा कला का जैसा सुंदर समन्वय हुआ वैसा हिंदी के किसी पूर्वप्रकाशित ग्रंथ में तो था ही नहीं, अब तक भी उसकी टक्कर का दूसरा ग्रंथ देखने में नहीं आया।

(ख) श्री संपूर्णानंद अभिनंदन ग्रंथ

श्री संपूर्णानंद जी को उनकी ६० वीं वर्षगांठ के अवसर पर सभा ने अभिनंदन ग्रंथ भेंट करने का निश्चय किया था। श्री संपूर्णानंदजी को १७ वैशाख सं० २००६ को यह ग्रंथ भेंट किया गया। इस अभिनंदन ग्रंथ में संस्कृत और हिंदी के प्रतिनिधि विद्वानों ने अत्युत्कृष्ठ मौलिक सामग्री का अर्घ्य उपस्थित किया। आरंभ में १०४ पृष्ठों में संस्कृत के लेख हैं जिनमें भारतीय दर्शन के विभिन्न अंगों का विवेचन, साहित्य संबंधी गवेषणात्मक निबंध, प्राचीन भारतीय संस्कृति विषयक अनुसंधानात्मक रचनाएँ एवं अन्यान्य विषयों के विवादग्रस्त प्रश्नों की मीमांसा है। हिंदी की रचनाएँ दो खंडों में हैं—एक में स्वतंत्र रचनाएँ हैं, दूसरे में संस्मरणात्मक लेख। स्वतंत्र रचनाओं में विज्ञान, इतिहास, काव्य, पुरातत्त्व, दर्शन, संगीत, साहित्य इत्यादि विभिन्न विषयों पर धुरंधर विद्वानों के विशिष्ट लेख हैं। संस्मरण खंड में उन चतुर्दश विद्वानों की कृतियाँ हैं जिन्हें श्री संपूर्णानंद जी को बहुत निकट से देखने-समझने का अवसर मिला है। ग्रंथ में श्री संपूर्णानंद जी के सन् १९१८ से लेकर अब तक विभिन्न अवसरों के अनेक चित्र हैं, इनके अतिरिक्त भारतीय शिल्प समृद्धि एवं संस्कृति के परिचायक दर्जनों चित्रों से यह ग्रंथ अलंकृत है।

(१२) हिंदी

हिंदी भाषा और नागरीलिपि के प्रचार और उस पर अनेक ओर से होनेवाले आघातों से उसकी रक्षा करने के उद्देश्य से सभा ने संवत् १९९७ में हिंदी नाम की एक मासिक पत्रिका अपने तत्त्वावधान में प्रकाशित करना आरंभ किया। इसके संपादक, प्रकाशक और मुद्रक श्री चंद्रबली पांडे थे।

भारत में 'हिंदी' का वार्षिक मूल्य ॥) रखा गया था। इंडियन प्रेस यद्यपि इस पत्रिका का मुद्रण बिना मूल्य करता रहा तथापि आरंभ से ही इसके प्रकाशन में घाटा रहा। हिंदी

के अल्पायु होने का यही मुख्य कारण हुआ। अपने प्रकाशन के साथ ही अपनी सेवाओं के बल पर इसने जो लोकप्रियता प्राप्त की वह उत्तरोत्तर बढ़ती गई। जैसे जैसे इसकी ग्राहक-संख्या बढ़ रही थी वैसे ही वैसे घाटे का परिमाण भी बढ़ रहा था। संवत् १९९९ में अनिच्छापूर्वक इसका वार्षिक मूल्य ||) से बढ़ाकर |||) कर देना पड़ा। संवत् २००० में जैसे तैसे पिछले वर्ष की ११ संख्याएँ छपीं। संवत् २००० के समस्त अंकों का एक सम्मिलित अंक प्रकाशित होने के अनंतर सभा से इसका संबंध विच्छिन्न हो गया। इसके बाद भी कुछ दिनों तक यह पत्रिका काशी के सरस्वती मंदिर (जतनबर) से निकलती रही, तदनंतर बिलकुल बंद हो गई। इसमें संदेह नहीं कि हिंदी जिस उद्देश्य को लेकर अवतरित हुई थी, अपने अल्पकालीन जीवन में ही उसकी बहुत कुछ पूर्ति उसने कर ली।

७—नागरी पाठशाला

जबलपुर के श्री नंदलाल दुबे के प्रस्ताव पर सभा की प्रबंध समिति ने २७ दिसम्बर १८९७ को नागरी की शिक्षा के लिए एक स्कूल खोलने का निश्चय किया और १ जनवरी १८९८ से एक छोटी सी पाठशाला केवल नागरी की शिक्षा देने के लिये सभा की ओर से खोली गई थी। पाठशाला का नाम नागरी पाठशाला रखा गया। प्रतिदिन सुबह शाम यह खुलती थी। यहाँ छोटे बालक नागरी की प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करते थे। आगे चलकर २५ ज्येष्ठ, १९५५ वि० (८ जून, १८९८) की प्रबंध समिति और ३० ज्येष्ठ, १९५५ वि० (१३ जून १८९८) की साधारण सभा के निश्चयानुसार प्रबंध में कुछ अड़चनें पड़ने के कारण पाठशाला-समिति तोड़ दी गई और पाठशाला के प्रबंध का कार्य भी पुस्तकालय समिति को ही सौंप दिया गया। इस कार्य में श्री गदाधरसिंह की विशेष अभिरुचि थी और वे ही इस पाठशाला के संचालन का अधिकांश कार्य किया करते थे। ११ श्रावण, १९५५ वि० (२७ जुलाई, १८९८) को अचानक उनका देहांत हो गया। उनके स्थान पर श्री श्यामसुंदरदास २७ भाद्रपद (१२ सितंबर) को पुस्तकालय कमेटी में चुने गए। उसी दिन उन्होंने साधारण बैठक में प्रस्ताव किया कि "सभा की नागरी पाठशाला १४ आश्विन (३० सितंबर) से बंद कर दी जाय और अग्रवाल समाज को लिखा जाय कि यदि वे लोग उचित समझें तो निज स्कूल में अन्य जाति के लड़कों के पढ़ने का भी प्रबंध करें।" प्रस्ताव सर्वसंमति से स्वीकृत हो गया और नागरी पाठशाला १४ आश्विन १९५५ वि० (३० सितंबर १८९८) से बंद कर दी गई।

८—हिंदी हस्तलिपि परीक्षा

आज जिस प्रकार नागरी लिपि की विशेषताएँ संसार प्रसिद्ध हैं, ५० वर्ष पहले उनकी ओर वैसी लोकदृष्टि नहीं थी। फारसी और रोमी लिपियाँ प्रधानता प्राप्त करने के लिये आगे आना चाहती थीं और हिंदी को लोकदृष्टि और राजदृष्टि दोनों से ही ओझल रखकर पीछे हटा देने का प्रयत्न कर रही थीं। जो लिपि सुंदर, स्पष्ट, शुद्ध और शीघ्र लिखी जा सके उसी का विशेष आदर होना स्वाभाविक है। उन दिनों फारसी और रोमी लिपियों की परीक्षाएँ पारितोषिक की घोषणा के साथ स्कूलों और कालेजों में आरंभ की गई

पर नागरी लिपि, जिसमें उस समय भी देश की अधिकांश जनता अपना कार्य करती थी, इसके लिये सर्वथा विस्मृत थी। सभा ने नागरी लिपि के प्रति इस उपेक्षा का अनुभव किया और इसके फलस्वरूप संवत् १९५० में (४ जून, १८९४) की बैठक में तत्कालीन मंत्री श्री श्यामसुंदरदास के प्रस्ताव पर वर्नाक्यूलर स्कूलों में उत्तम नागरी लिपि लिखनेवाले छात्रों को उत्साहित करने के लिये पारितोषिक देने का निश्चय किया। इस निश्चय के अनुसार शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर से पत्रव्यवहार किया गया। उन्होंने सभा का प्रस्ताव स्वीकृत कर लिया। सभा ने वर्नाक्यूलर स्कूलों के विद्यार्थियों में सर्वोत्तम नागरी अक्षर लिखनेवाले छात्रों को प्रति वर्ष क्रमशः १०), ८) और ५) कुल २३) के तीन पारितोषिक देना स्वीकार किया। शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर ने सभा द्वारा निर्धारित इस परीक्षा का बहुत अच्छा प्रबंध कर दिया। स्कूलों के डिप्टी और सब-डिप्टी इंस्पेक्टरों की व्यवस्था से प्रथम वर्ष ही इस परीक्षा में बनारस डिविजन के इंस्पेक्टर के अधीन प्रायः सभी वर्नाक्यूलर स्कूलों ने योग दिया।

प्रथम वर्ष सं० १९५१ में पुरस्कृत होनेवाले छात्रों के नाम निम्नलिखित हैं—

१—बजरंगी लाल, बैरिया स्कूल, जि० बलिया १०)
२—रामअवधलाल, खलीलाबाद स्कूल, बस्ती ८)
३—कुबेरसिंह, निजामाबाद स्कूल, आजमगढ़ ५)

इनके अतिरिक्त भी कतिपय विद्यार्थियों ने सुंदर अक्षर लिखे थे। उन्हें केवल प्रशंसापत्र दिए गए और फकीरा नामक एक बालक को २ रु० का एक विशेष पारितोषिक दिया गया। पारितोषिक पानेवाले विद्यार्थियों को 'हरिप्रकाश प्रेस' के प्रबंधकर्ता बाबू जगन्नाथप्रसाद वर्मा ने 'काश्मीर कुसुम' नामक पुस्तक और साहित्याचार्य श्री अंबिकादत्त व्यास ने 'साहित्य नवनीत' नामक पुस्तक की ७ प्रतियाँ उपहार दी थीं।]

संवत् १९५३ तक यह परीक्षा बनारस डिविजन के वर्नाक्यूलर स्कूलों में ही होती रही। किंतु संवत् १९५४ में सरकार ने यह परीक्षा पूरे पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध प्रांत (आधुनिक उत्तर प्रदेश) भर के लिये जारी कर दी। इस पर सभा ने पारितोषिक की संख्या ५ के बदले १० कर दी तथा उनका परिमाण इस प्रकार हो गया—

प्रथम १०), द्वितीय ८), तृतीय ५), चतुर्थ ४), पंचम ३), कुल योग ३०) वार्षिक।

यह परीक्षा पूरी व्यवस्था और पाबंदी के साथ होती थी तथा शिक्षा विभाग भी इसमें गंभीरतापूर्वक सहयोग देता था। जैसा कि संवत् १९५५ में निर्धारित एतद्विषयक सर्व-प्रथम नियमावली से स्पष्ट होता है। यह नियमावली निम्नलिखित है:—

१—हस्तलिपि सफेद फुलिस्केप कागज के आधे ताव पर लिखी जाय और उसमें कम से कम १० और अधिक से अधिक २५ पंक्तियां हों।

२—हस्तलिपि कागज के एक ही ओर हो, बेल बूटे आदि न बने हों और काली व ब्लूब्लैक स्याही को छोड़कर दूसरी स्याही काम में न लाई जाय।

३—प्रत्येक बालक को (१) नाम, (२) क्लास, (३) स्कूल, (४) तहसील और (५) जिला लिखना चाहिए। इनमें से यदि एक बात भी छूट जायगी तो उस हस्तलिपि पर विचार न किया जायगा।

४. इस बात पर पूरा ध्यान रहे कि हस्तलिपियाँ बालकों की ही लिखी हों।

५. प्रत्येक डिविजन के असिस्टेंट इंसपेक्टर अपने अधीनस्थ स्कूलों की लिपियों में से १५ लिपियाँ चुन और उन्हें नंबरवार लगा कर प्रतिवर्ष के फरवरी मास के अंत तक असिस्टेंट इंसपेक्टर बनारस के पास भेज देंगे।

६. असिस्टेंट इंस्पेक्टर बनारस इन सब लिपियों को मंत्री नागरीप्रचारिणी सभा, काशी के पास भेज देंगे।

७. सभा एक सब-कमेटी नियत करेगी, जिसके सभासद् तीन वा पाँच होंगे। इसमें असिस्टेंट इंस्पेक्टर बनारस और मंत्री नागरीप्रचारिणी सभा अवश्य सभासद् रहेंगे। कमेटी समस्त लिपियों को देखकर उन १५ बालकों के नाम नंबरवार सभा के पास लिख भेजेगी, जिन्होंने सबसे उत्तम लिखा होगा।

८. प्रतिवर्ष सभा की ओर से ५ पारितोषिक १०) ८), ५) ४) और ३) के तथा १० प्रशंसापत्र दिए जायँगे।

इसके पश्चात् समय समय पर इनमें आवश्यक परिवर्तन-संशोधन होते रहे, जिनके कारण यह परीक्षा उत्तरोत्तर लोकप्रिय होती गई।

संवत् १९६० मे ग्वालियर मे नागरी का विशेष प्रचार हुआ। उसी प्रसंग में सभा ने यह निश्चय किया कि ग्वालियर राज्य के विद्यार्थियों के लिये भी हिंदी हस्तलिपि परीक्षा का प्रबंध किया जाय और प्रतिवर्ष ५), ३), और २) के तीन पारितोषिक तथा ६ प्रशंसा-पत्र वहाँ के लिये भी नियत किए जायँ। संवत् १९६१ से ग्वालियर के स्कूलों में भी यह परीक्षा आरंभ हो गई और यह क्रम संवत् १९७७ तक निरंतर चलता रहा। संवत् १९७८-७९ और ८० में लगातार तीन वर्षों तक ग्वलियर का कोई छात्र पारितोषिक के योग्य नहीं समझा गया, अतः वहाँ के किसी छात्र को पारितोषित नहीं दिया जा सका। निदान संवत् १९८१ से यह परीक्षा स्वतः बंद हो गई। संवत् १९६१ में कश्मीर के बालकों को भी पारितोषिक देने का निश्चय किया गया था, किंतु वहाँ के स्कूलों की शिथिलता के कारण यह कार्य आगे न बढ़ सका। संवत् १९६२ में वृंदावन के श्री राधाचरण गोस्वामी ने 'ललिता पारितोषिक' के नाम से ५) का एक पारितोषिक मथुरा जिले के स्कूलों की उस कन्या को देना निश्चित किया था, जिसकी नागरी हस्तलिपि सबसे अच्छी समझी जाय। यह पारितोषिक संवत् १९६२ से १९७२ तक दिया जाता रहा, किंतु उसके पश्चात् मथुरा के बालिका-विद्यालयों की शिथिलता के कारण बंद हो गया।

संवत् १९७५ तक हिंदी हस्तलिपि [illegible] स्कूलों के [illegible] संमिलित हो सकते थे, किंतु संवत् १९७६ में [illegible] के [illegible] को उक्त परीक्षा में संमिलित करने का निश्चय किया गया और [illegible] की रकम ३०) से बढ़ाकर ५३) वार्षिक कर दी। [illegible] यह क्रम [illegible] निरंतर चलता रहा, पर संवत् १९८३-८४ में [illegible] अतएव प्रबंध समिति ने निश्चय किया कि ५३) का [illegible] दिया जाय और केवल प्रशंसापत्र दिए जायँ। [illegible]

सूचना दे दी जाय और नियमों में परिवर्तन करके उनके पास भेज दिया जाय।" इस निश्चय के अनुसार पारितोषिक देना बंद कर दिया गया और इसकी सूचना शिक्षा विभाग को दे दी गई। यद्यपि सभा ने परीक्षा बंद नहीं की और प्रमाण-पत्र देने का निश्चय यथा पूर्व ही रहने दिया, पर बालकों के लिये पारितोषिक में जो आकर्षण था वह प्रमाणपत्रों में कब हो सकता था। इसलिए परीक्षाओं में छात्रों का संमिलित होना बंद हो गया और १९०४ से कोई बालिका वा बालक इनमें नहीं बैठा। तब से ये परीक्षाएँ बिलकुल बंद हैं।

९—व्याख्यान-माला

(१) सुबोध व्याख्यानमाला

देशकी अशिक्षा दूर करने और सर्वसाधारण को विज्ञान और स्वास्थ्य आदि विषयों के सिद्धांतों से परिचित करने में सहायता देने के उद्देश्य से सभाने व्याख्यानमाला चलाने का निश्चय किया था। संवत् १९२१ में इसके लिये सभा ने सर्वश्री रेवरेंड ई० ग्रीव्स, राधाकृष्णदास, डा० छन्नूलाल, श्यामसुन्दरदास और रामनारायण मिश्र (मंत्री) की उपसमिति भी बनाई थी। इस समिति के उद्योग से पहले ही वर्ष सात व्याख्यान हुए। यह व्याख्यानमाला सोलह वर्ष (सं० १९७६) तक बराबर चलती रही। संवत् १९७७ से यह 'सुबोध व्याख्यानमाला' बन्द हो गई।

(२) 'प्रसाद' व्याख्यानमाला

इसके बाद संवत् १९८८ में स्वर्गीय श्री जयशंकर प्रसाद ने ९००) की निधि 'साहित्य परिषद' के लिये सभा को दान दी। उसके उद्देश्य की पूर्ति के लिये 'साहित्यगोष्ठी' स्थापित की गई, जिसके द्वारा साहित्य प्रेमियों को समय समय पर स्थानीय तथा बाहर के अनेक विद्वानों और कवियों के व्याख्यान और रचनाएँ सुनने के अवसर मिलते रहते हैं। किंतु सर्वसाधारण को इससे विशेष लाभ होता न देख गोष्ठी को अधिक उपयोगी और आकर्षक बनाने के लिये सं० १९९४ से इसके अंतर्गत 'प्रसाद' व्याख्यानमाला की आयोजना की गई। जिसमें समय समय पर विद्वानों के सुबोध व्याख्यान हुआ करते हैं। सुबोध व्याख्यानमाला का यह पुनर्जन्म भी श्री रामनारायण मिश्र जी की प्रेरणा से हुआ। उन्होंने कई वर्ष 'प्रसाद' व्याख्यानमाला को काशी के जनसमाज के सभी वर्गों में लोकप्रिय बनाने के उद्देश्य से विविध विषयों पर अधिकारी एवं अनुभवी विद्वानों के व्याख्यानों की व्यवस्था की थी। स्वास्थ्य, मनोविज्ञान, वास्तुकला, समाजवाद, प्राचीन तथा अर्वाचीन इतिहास, राजनीति आदि विषयों के सचित्र, मनोरंजक और ज्ञानवर्द्धक व्याख्यान पहले ही वर्ष हुए थे। सं० २००३ से इसके अन्तर्गत सम्मेलन की उत्तमा परीक्षा के विद्यार्थियों के लाभार्थ विशेषज्ञ विद्वानों के व्याख्यानों की व्यवस्था भी की गई। यह व्याख्यान माला इसी रूप में अब तक चल रही है।

१०—पुरस्कार और पदक

संवत् १९५१ में सभा ने सर्वप्रथम दो पदक—एक चाँदी का पदक हिंदी भाषा के इतिहास के लिए तथा दूसरा सोने का पदक हिंदी के व्याकरण के लिए—देना निश्चित

किया था। बहुत प्रतीक्षा के बाद भी इतिहास की कोई रचना नहीं आई। व्याकरण की कुछ पुस्तकें अवश्य आईं थीं, किंतु वे पदक के योग्य नहीं समझी गईं। संवत् १९५७ में उत्तमोत्तम लेखों की रचना को उत्साहित करने के उद्देश्य से प्रतिवर्ष दो रजत पदक देने का निश्चय किया गया और इसके लिये एक संक्षिप्त नियमावली बना दी गई। संवत् १९७१ तक ये पदक दिए जाते रहे। इनमें से एक का नामकरण 'राधाकृष्णदास पदक' तथा दूसरे का 'रेडिचे पदक किया गया था। इनके अतिरिक्त अन्य सज्जन भी उत्तमोत्तम पुस्तकों, लेखों आदि को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से समय समय पर विभिन्न पारितोषिक तथा पदक सभा द्वारा दिया करते थे।

संवत् १९७३ से स्थायी रूप से पुरस्कार-पदक दिए जाने के लिये निधियों की व्यवस्था आरंभ हुई। इसका क्रमानुसार विवरण निम्नलिखित है—

(१) राजा बलदेवदास बिडला पुरस्कार—२००) का यह पुरस्कार अध्यात्म, सदाचार, मनोविज्ञान और दर्शन के सर्वोत्तम ग्रंथपर प्रति चौथे वर्ष दिया जाता है।

(२) बटुकप्रसाद पुरस्कार—२००) का यह पुरस्कार सर्वोत्तम मौलिक नाटक या उपन्यास के लिये प्रति चौथे वर्ष दिया जाता है।

(३) रत्नाकर पुरस्कार (१)—२००) का यह पुरस्कार व्रजभाषा के सर्वोत्तम ग्रंथ के लिए प्रति चौथे वर्ष दिया जाता है।

(४) रत्नाकर पुरस्कार (२)—२००) का यह पुरस्कार व्रजभाषा के सदृश हिंदी की अन्य भाषाओं (यथा, डिंगल, राजस्थानी, अवधी, बुंदेलखंडी, भोजपुरी, छत्तीसगढ़ी, आदि) की सर्वोत्तम रचना अथवा सुसंपादित ग्रंथ के लिये प्रति चौथे वर्ष दिया जाता है।

(५) छन्नूलाल पुरस्कार—स्व० श्री रामनारायण मिश्र की दी हुई निधि से २००) का यह पुरस्कार विज्ञान विषयक सर्वोत्तम ग्रंथ पर प्रति चौथे वर्ष दिया जाता है।

(६) जोधसिंह पुरस्कार—२००) का यह पुरस्कार सर्वोत्तम ऐतिहासिक ग्रंथ के लिये प्रति चौथे वर्ष दिया जाता है।

(७) माधवीदेवी महिला पुरस्कार—१००) का यह पुरस्कार गृहशास्त्र संबंधी सर्वोत्तम पुस्तक की रचयित्री को प्रति चौथे वर्ष दिया जायगा।

(८) डा० श्यामसुंदरदास पुरस्कार—सभा ने यह निश्चय किया है कि राय-बहादुर डा० श्यामसुंदरदास की पुण्य स्मृति में १०००) तथा २००) के दो पुरस्कार प्रति चौथे वर्ष दिए जाया करें जिनका क्रम इस प्रकार हो—

१. १०००) का एक पुरस्कार संवत् २००५ से प्रति चौथे वर्ष दिया जाया करे।

२. २००) का एक पुरस्कार संवत् २००३ से प्रति चौथे वर्ष ऐसे लेखक की सर्वश्रेष्ठ कृति पर दिया जाय, जिनकी मातृ-भाषा हिंदी न हो तथा जो प्रधानतः अहिंदी भाषी प्रांत में निवास करते हों।

इन दोनों पुरस्कारों के लिये सभा को १००००) की स्थायी निधि संकलित करनी है। सर्वप्रथम दिए जानेवाले दोनों पुरस्कार सभा ने अपनी साधारण आय में से देना निश्चित किया है। किंतु स्थायी निधि के लिए १००००) की जिसकी अभी तक नहीं हो सकी है।

(९) भैरवप्रसाद स्मारक पुरस्कार—प्रति वर्ष अखिल भारतीय हिंदी साहित्य संमेलन की प्रथमा परीक्षा में उत्तर प्रदेश में सर्वप्रथम आनेवाले विद्यार्थी को ३) का यह पुरस्कार दिया जाता है।

(१०) मांडलिक पुरस्कार—मध्यभारत के श्री कृष्णचंद्र जी मांडलिक ने १८००) की निधि सभा को इसलिए प्रदान की है कि इसके व्याज से २००) का एक पुरस्कार प्रति चौथे वर्ष स्वतंत्र भारत के उत्थान और विकास को प्रेरित करनेवाले सर्वोत्तम ग्रंथ पर दिया जाय। प्रथम पुरस्कार सं० २०११ तक के ग्रंथ पर दिया जायगा।

(११) डा० हीरालाल स्वर्णपदक—यह स्वर्णपदक पुरातत्त्व, मुद्राशास्त्र, हिंद-विज्ञान (इंडोलोजी), भाषा विज्ञान तथा पुरालिपिशास्त्र (एपीग्राफी) संबंधी हिंदी में लिखित सर्वोत्तम मौलिक पुस्तक अथवा गवेषणापूर्ण निबंध पर प्रति दूसरे वर्ष दिया जाता है।

(१२) द्विवेदी स्वर्णपदक—प्रति वर्ष यह स्वर्णपदक हिंदी में लिखित सर्वोत्तम पुस्तक के रचयिता को दिया जाता है।

(१३) सुधाकर पदक—यह रौप्य पदक बटुकप्रसाद पुरस्कार पानेवाले सज्जन को दिया जाता है।

(१४) ग्रीव्ज पदक—यह रौप्य पदक डा० छन्नूलाल पुरस्कार पानेवाले सज्जन को दिया जाता है।

(१५) राधाकृष्णदास पदक—यह रौप्य पदक रत्नाकर पुरस्कार (१) पानेवाले सज्जन को दिया जाता है।

(१६) बलदेवदास पदक—यह रौप्य पदक रत्नाकर पुरस्कार (२) प्राप्त करनेवाले सज्जन को दिया जाता है।

(१७) गुलेरी पदक—यह रौप्य पदक जोधसिंह पुरस्कार पानेवाले सज्जन को दिया जाता है।

(१८) रेडिचे पदक—यह रौप्य पदक बिड़ला पुरस्कार पानेवाले सज्जन को दिया जाता है।

(१९) वसुमति पदक—यह रजत पदक मांडलिक पुरस्कार प्राप्त करनेवाले सज्जन को दिया जायगा।

(२०) भगवानदेवी बाजोरिया पदक—यह रजत पदक माधवीदेवी महिला पुरस्कार पानेवाली लेखिका को दिया जायगा।

(२१) पुच्छरत पदक—प्रति वर्ष यह रजतपदक पंजाब विश्वविद्याय की हिंदी रत्न-परीक्षा में सर्वप्रथम होनेवाले छात्र को दिया जाता है।

११—अनुशीलन

हिंदी भाषा और साहित्य के शोध संबंधी कार्यों के निमित्त विशेष अध्ययन करनेवाले अनुसंधायकों के लिये इस पुस्तकालय से किसी न किसी रूप में सहायता लेना अनिवार्य रूप से आवश्यक है। डा० हीरानंदशास्त्री-संग्रह तथा श्री मयाशंकर याज्ञिक हस्तलिखित

संग्रह की पुस्तके मिलने के पहले ही सभा के पास हस्तलेखो और आकर ग्रंथो की इतनी प्रभूत सामग्री एकत्र हो चुकी थी कि अनेक विषयो पर डी० फिल०, पी एच० डी०, डी० लिट्, आदि के लिये शोध करनेवाले छात्रो को समस्त आवश्यक सामग्री यहीं उपलब्ध हो जाती थी। विश्वविद्यालयों के तत्वाधान में होनेवाले शोध कार्यों में यद्यपि इस सामग्री का उपयोग बराबर हो रहा था, तथापि ऐसे अनेक विषयो की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा था, जिनके संबध में व्यवस्थित रूप से कार्य होने पर साहित्य के इतिहास पर नवीन प्रकाश पड़ने की संभावना सभा समझती थी। ऐसी स्थिति में उसने स्वयं अपने तत्वावधान मे अनु-संधान कार्य की व्यवस्था करना निश्चित किया। संवत् १९९८ मे श्री राय कृष्णदास की अध्यक्षता मे १० सज्जनो की एक उपसमिति संघटित करके 'अनुशीलन विभाग' की स्थापना कर दी गई। इस उपसमिति के परामर्श के अनुसार सभा ने हिंदी की जनपदीय बोलिया के वैज्ञानिक अध्ययन से कार्यारंभ करना निश्चित किया। किंतु यह निश्चय कई कठिनाइयो के कारण कार्यान्वित नहीं हो सका।

सवत् १९९९ में डा० हीरानंदशास्त्री का संग्रह तथा संवत् २००० में श्री मयाशंकर याज्ञिक का सुप्रसिद्ध हस्तलिखित सग्रह सभा मे आ जाने के कारण इस विभाग का कार्य व्यवस्थित रूप मे आगे बढाना नितात आवश्यक हो गया, अतएव सं० २००० मे श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र की अध्यक्षता मे इस विभाग का पुनस्संगठन किया गया। इसके अनु-सार सभा ने निश्चय किया था कि द्रव्य की व्यवस्था होनेपर छात्रवृति देकर अनुशीलन का कार्य कराया जाय। श्री रामनारायण मिश्र के उद्योग से कानपुर के सेठ [illegible] सिहानियाजी ने तीन वर्षों तक ५०) मासिक इस कार्य के लिये प्रदान करना स्वीकार किया। सभा की अर्द्धशती के उपलक्ष्य मे मिलनेवाली इस [illegible] का नाम 'सिहानिया अर्द्धशती वृत्ति' रखा गया।

आश्विन संवत् २००१ से श्री नटेकृष्ण, एम० ए० [illegible] अनुसंधायक नियुक्त किए गए। अनुसधान की सामग्री के सकलन के [illegible] ज्ञात हुआ कि मध्यकालीन हस्तलिखित ग्रंथो मे भारतीय इतिहास के [illegible] है। औरंगजेब के पुत्र मुअज्जम शाह तथा हिंदी के [illegible] ऐतिहासिक सामग्री मिली। किंतु साहित्यिक [illegible] मिला वह था भारतीय प्रेमाख्यानक प्रबंध काव्यों का। [illegible] जहाँ तक प्रेमप्रधान प्रबंध काव्यो का [illegible] इस नवीन सूत्र को पकड़कर आगे बढ़ने [illegible] प्रेमप्रबंधो की भी एक शाखा है, [illegible] रखती है। अतएव निश्चय किया [illegible] नुसार इस विषय पर कार्य होने [illegible] गई तथापि श्री नटेकृष्ण जी [illegible] विषय वस्तु वर्णन, आदि [illegible] छानबीन करने पर अनेक [illegible] में प्रकाशित हुई। [illegible]

नामक ग्रंथ की छानबीन करने पर अनेक नवीन तथ्य प्रकट हुए। संवत् २००५ के उपरांत छात्रवृत्ति की व्यवस्था न हो सकने के कारण अनुशीलन विभाग बंद हो गया।

१२—हिंदी संकेत लिपि तथा टंकण

संवत् १९५१ में ही सभा ने हिंदी में त्वरित लेख प्रणाली के अभाव का भी अनुभव किया तथा उसी वर्ष इसके लिये संकेत बनाने और उन्हें प्रचलित कराने का निश्चय किया। संवत् १९५५ में साहित्याचार्य श्री अंबिकादत्त व्यास ने त्वरित लेखन के चिह्न तैयार किए। सभा का विचार था कि यदि इसका परीक्षण सफल हुआ तो वह इस विषय का एक ग्रंथ प्रकाशित करेगी और इस प्रणाली के प्रचार का उद्योग भी किया जायगा। किंतु व्यास जी के रुग्ण हो जाने के कारण परीक्षण न हो सका और उनके संकेतों की बात जहाँ की तहाँ रह गई। इसके बाद संवत् १९७४ में सभा ने एक शीघ्र लिपि प्रणाली स्वयं तैयार कराई और श्री श्रीशचंद्र बसु तथा श्री निष्कामेश्वर मिश्र से उसका संपादन कराया। परंतु भारत में उसे लिथो पर भी छापने के लिये कोई प्रेस तैयार नहीं हुआ। अतएव इसे इंगलैंड भेजा गया। हार्टफोर्ड के स्टीफन आस्टिन ऐंड संस के यहाँ से सं० १९६६ में पुस्तक छपकर आ गई, किंतु उस समय इस विषय की शिक्षा का समुचित प्रबंध न हो सका। कई वर्ष बाद जब कांग्रेस की प्रांतीय सरकारों द्वारा हिंदी की शीघ्र लिपि प्रणाली के ज्ञाताओं को प्रोत्साहन मिलने की आशा हुई, तब उसकी शिक्षा के प्रबंध का पुनः उद्योग किया गया, और सवत् १९९४ की विजयादशमी को संयुक्तप्रांतीय लेजिस्लेटिव एसेंबली के अध्यक्ष माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टंडन के कर कमलों से सभा के संकेत लिपि-शिक्षा की कक्षा का उद्घाटन हुआ। इस कक्षा में काशी के श्री निष्कामेश्वर मिश्र बी० ए० द्वारा तैयार की हुई प्रणाली की शिक्षा का प्रबंध किया गया था, क्योंकि उस समय यही प्रणाली सर्वोत्तम समझी जाती थी। वे ही इस विभाग के अवैतनिक अध्यक्ष थे तथा जीवन पर्यंत उस पद पर बने रहकर सभा की सेवा करते रहे। कांग्रेस के अधिवेशनों में सन् १९२१ से अब तक इसी प्रणाली से पूरा विवरण लिया जाता रहा है। मिश्र जी ही कक्षा के प्रधानाध्यापक थे और उनके साथ सर्वश्री गोवर्धनदास तथा श्रीराम श्रीवास्तव बी० ए० अवैतनिक रूप से कार्य करते थे। पहले वर्ष इस कक्षा में ३० विद्यार्थियों ने निःशुल्क शिक्षा प्राप्त की और उसी वर्ष यहाँ के सीखे हुए दो छात्रों की नियुक्ति संयुक्त प्रांत की एसेंबली में हो गई। शनैः शनैः इसका प्रचार बढ़ने लगा और अन्य प्रांतों के छात्र भी यहाँ आने लगे। संवत् १९९५ से यहाँ हिंदी टंकण (टाइप राइटिंग) की शिक्षा का भी प्रबंध किया गया। इसी वर्ष से इस कक्षा का नाम 'संकेतलिपि-विद्यालय' कर दिया गया और श्री गोवर्धनदास इसके अवैतनिक प्रधानाध्यपक बनाए गए।

संवत् १९९६ में सभा में हुए अट्ठाइसवें हिंदी साहित्य संमेलन के अवसर पर, विद्यालय की वार्षिक परीक्षा तथा अखिल भारतीय हिंदी संकेत लिपि प्रतियोगिता का आयोजन किया गया था। इसमें यहाँ के विद्यार्थियों ने सफलतापूर्वक प्रमाणपत्र और पुरस्कार प्राप्त

किए। प्रतियोगिता का प्रथम पुरस्कार १७५ शब्द प्रति मिनट की गति से लिखनेवाले यहीं के एक छात्र श्री बालकृष्ण शर्मा को मिला था।

सरकार के खुफिया विभाग में उर्दू संकेतलिपि का ही व्यवहार होता था। किंतु बारह मास तक शिक्षा पाने पर भी इसे सीखनेवाले सरकारी उम्मेदवारों की गति १०० शब्द प्रति मिनट से अधिक नहीं हो पाती और यहाँ हिंदी संकेत लिपि में आठ मास में ही विद्यार्थी १५० की गति प्राप्त कर लेते थे। यह देख सं० १९९६ से सरकार ने अपने उक्त विभाग में हिंदी संकेत लिपि जाननेवालों को भी लेना आरंभ कर दिया।

संवत् १९९६ में इस विद्यालय में ४७ छात्रों ने निःशुल्क शिक्षा प्राप्त की और १९९७ में ३२ ने। काशी नगर में अन्यत्र इस विषय की शिक्षा देने के लिये दूसरे विद्यालय खुल जाने, प्रांतों में कांग्रेस सरकार के त्यागपत्र दे देने, छात्रों को काम मिलने में कठिनता होने और सभा को इस कार्य के लिये कहीं से आर्थिक सहायता न मिलने के कारण यह विद्यालय संवत् १९९८ में कुछ दिनों के लिये बंद कर दिया गया।

हिंदी और नागरी को राजभाषा तथा राजलिपि का पद प्राप्त होने पर हिंदी की संकेत लिपि (शार्टहैंड) और टंकण (टाइपराइटिंग) जाननेवालों की बढ़ती हुई माँग को देख कर सभा ने उक्त विद्यालय का कार्य सं० २००४ से पुनः चालू किया। उसी वर्ष माघ मास के अंत में शिक्षार्थियों की संख्या १३० तक पहुँच गई। सभाभवन में स्थान न होने के कारण शिक्षा का प्रबंध स्थानीय हरिश्चंद्र कालेज और दयानंद स्कूल के भवन में किया गया। इसी वर्ष टंकण की शिक्षा के लिये महिलाओं का भी एक विभाग अलग खोल दिया गया।

प्रांतीय शासन द्वारा तीन टंकण यंत्रों के लिये २५०० रु० की [illegible] मिली, जिसके कारण विद्यालय की शिक्षा योजना सफलतापूर्वक [illegible] होने लगी। विद्यालय के अध्यक्ष श्री निष्कामेश्वर मिश्र तथा प्रधानाध्यापक श्री [illegible] मिश्र बनाए गए। संवत् २००५ में भी कक्षाएँ सभा में [illegible] के [illegible] विद्यालयों में लगती रहीं। इस वर्ष ३१ विद्यार्थियों ने [illegible] प्रायः समस्त विद्यार्थी सरकारी अथवा अर्द्धसरकारी [illegible] नियुक्त कर लिए गए।

संवत् २००६ में उत्तर प्रदेशीय [illegible] ([illegible]) [illegible] कर्मचारियों को इसी प्रणाली से [illegible] प्रधानाध्यापक श्री बालकृष्ण मिश्र [illegible] उपाध्याय प्रधानाध्यापक नियुक्त [illegible] टंकण की शिक्षा ग्रहण की।

पिछले तीन वर्षों में [illegible] काशी में तथा अन्यत्र [illegible] खोल लिए। अनेक [illegible] अतएव सं० २००७ [illegible]

२ वैशाख २००२ से ४ वैशाख २००२ (१५ से १७ अप्रैल) तक हृषीकेश में निकेतन की ओर से प्रचार कार्य हुआ। पहले दिन वहाँ के श्रीभरतमंदिर के महंत श्री परशुराम जी ने सभापति का आसन ग्रहण किया, जिसमें गीता प्रेस के भक्तप्रवर श्री जयदयाल गोयनका और अन्य सज्जनों के व्याख्यान हुए। दूसरे दिन साहित्य संमेलन के भूतपूर्व अध्यक्ष गोस्वामी गणेशदत्त जी एवं तीसरे दिन स्थानीय नोटीफाइड एरिया के चेयरमैन रायसाहब लाला सेवकराम के सभापतित्व में संतोषजनक प्रचार हुआ। व्याख्यानदाताओं में कालीकमलीवाले, गोयनका-सत्संग, पंजाब-सिंध-सत्र, वैदिकाश्रम, पंजाब हिंदी-साहित्य-संमेलन, काश्मीर,हिंदी प्रचारिणी-सभा, पंजाब-सनातन-धर्म-सभा, ऋषिकुल-ब्रह्मचर्याश्रम, महावीर-दल, मोहनी-आश्रम आदि संस्थाओं के प्रतिनिधि थे। जनता में बहुत अधिक पंजाब निवासी थे, जिनपर इन व्याख्यानों का पर्याप्त प्रभाव पड़ा।

२ आषाढ़ सं० २००१ (१६ जून १९४४) को एक हिंदी विद्या-मंदिर की स्थापना की गई, जिसका उद्देश्य पंजाबी बालक-बालिकाओं को हिंदी साहित्य संमेलन और पंजाब की हिंदी परीक्षाओं के लिये तैयार करना था। इसका उद्घाटन श्रीयुत इंद्र विद्या-वाचस्पति ने किया था। प्रौढ़ लोगों के लिये रात्रि में भी पाठशाला चलाई गई, जिसका उद्घाटन १२ आषाढ़ सं० २००५ (२६ जून १९४८) को डाक्टर धीरेंद्र वर्मा ने किया था। पंजाब के विभाजन के कारण बहुत से शरणार्थी हरिद्वार आ गए थे। उनकी कन्याओं को हिंदी पढ़ाने में इस विद्यामंदिर ने संतोषजनक कार्य किया था, पर धनाभाव के कारण ३१ श्रावण सं० २००६ (१६ अगस्त १९४९) को यह बंद कर दिया गया। निकेतन में अब भी कई परीक्षाओं का केंद्र है।

२० आश्विन २००५ से १४ कार्तिक २००५ (६ अक्टूबर १९४८ से ३१ अक्टूबर १९४८) तक निकेतन के संचालक ने सभा के एक स्थायी सदस्य की कृपा से हिंदी प्रचार के लिये पूर्वी पंजाब में—१ अमृतसर, २ जालंधर, ३ होशियारपुर ४ चिंतपर्णी, ५ ज्वालामुखी, ६ काँगड़ा, ७ धर्मशाला, ८ पठानकोट, ९ गुरुदासपुर, १० धारीवाल, ११ बटाला, १२ फीरोजपुर, १३ फाजिलका, १४ अबोहर, १५ लुधियाना, १६ अंबाला, १७ शिमला तथा १८ सोलन का दौरा किया और लौटते समय दिल्ली भी गए। उन्होंने उन समाचार पत्रों के संचालकों से भेंट की जिनकी भाषा हिंदी है पर लिपि फारसी। इन सज्जनों ने बताया कि पंजाब की उथल पुथल से हुई आर्थिक हानि, हिंदी का अपना नया प्रेस खोलने की कठिनाई और सबसे अधिक उनके सहस्रों पुराने ग्राहकों के, जो शरणार्थी होकर देश के भिन्न भिन्न प्रांतों में फैले हुए हैं, उर्दू से ही परिचित होने के कारण अभी उन्हें विवश होकर फारसी लिपि ही रखनी पड़ रही है। उन्होंने यह आश्वासन दिया कि यथासंभव धीरे धीरे उनके पत्रों की लिपि भी नागरी हो जायगी।

अर्द्धकुंभ पर जो कुछ प्रचार कार्य हुआ उससे प्रोत्साहित होकर पूर्णकुंभ पर फिर वहाँ संमेलन करने का विचार हुआ। कुछ मित्रों और हिंदी प्रेमियों, विशेषकर रा० ब० श्री रामदेव जी चोखानी की सहायता से कुंभनिधि स्थापित करने के लिये कलकत्ते में कुछ धन जमा किया गया। १८ फाल्गुन से लेकर २९ चैत्र तक पूर्णकुंभ के अवसर पर प्रचार

कार्य किया गया, जिसमें गुरुकुल कॉगड़ी, विभिन्न साधु सप्रदायों, ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, रविदास आश्रम, आदि के सहयोग से सभाओं और व्याख्यानो का आयोजन हुआ तथा प्रचार सबधी साहित्य वितरित किए गए। २३, २४, २५, चैत्र २००६ को राष्ट्रभाषा और मानस समेलन का आयोजन श्री चद्रबली पाडेय जी के सभापतित्व में हुआ। समेलन के अनतर सभा की तरफ से २७ चैत्र को श्री हरिकृष्ण प्रेमी के रक्षाबधन पर आधारित 'चिता की राख' और २९ चैत्र को श्री मानसलाल चतुर्वेदी कृत 'कृष्णार्जुन युद्ध' नाटक का अभिनय हुआ।

इस पूर्णकुभ के समय सभा ने उपसमिति के निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत किए—

"(क) पजाब निवासी की लिखी हुई और पजाब के किसी प्रेस में छपी हुई पजाबी भाषा के नवीन तथा प्राचीन साहित्य की देवनागरी लिपि में मुद्रित सर्वोत्तम पुस्तक पर प्रति वर्ष निकेतन द्वारा २००) वार्षिक पुरस्कार दिया जाय।

"(ख) शरणार्थी सिक्खों और सिंधियों मे हिंदी और नागरी के अध्ययन में विशेष प्रगति उत्पन्न करने के उद्देश्य से निकेतन द्वारा उस सिक्ख या सिंधी विद्यार्थी को दो वर्ष तक प्रति मास दस रुपया छात्रवृत्ति दी जाय जो, मैट्रिक परीक्षा में हिंदी साहित्य मे सर्वप्रथम होकर इटरमीडिएट मे हिंदी लेकर पढे। छात्रवृत्ति प्रति वर्ष दस महीने दी जाएगी।"

हरिद्वार के पास पहाड़ी-भाषा भाषी बहुत बड़ी सख्या मे रहते हैं, जिनकी भाषा हिंदी ही का एक रूप है, पर उसके साहित्य से हिंदी के विद्वानों का बहुत कम परिचय है। इसलिए उसके सबध मे भी निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुआ—

("निकटस्थ गढवाल, कमायूँ आदि स्थानो की भाषाओं और अन्य पर्वतीय भाषाओं पर गवेषणापूर्ण लेख लिखने या व्याख्यान देनेवाला को पुरस्कार देने की व्यवस्था की जाए।")

२००) का उक्त पुरस्कार विद्वानो की समति के अनुसार डा० भाई वीरसिंह जी को उनकी पुस्तक 'वीर वचनवाली' पर सवत् २००८ में अर्पित किया गया।

निकेतन का सचालन आरभ से ही श्री प० रामनारायण मिश्र जी की देखरेख मे होता रहा। उन्हीं के प्रयत्न से यह प्रचार केंद्र सभा को प्राप्त हुआ था और अपने जीवन पर्यंत वे इसकी उन्नति म तत्पर रहे। उनके निधन के पश्चात् सवत् २००९ के अत में सभा ने श्री सेठ नारायणदास जी बाजोरिया को वहाँ का सचालक चुना। सप्रति श्री देवीनारायण जी पश्चिम भारत हिंदी प्रचार-उपसमिति के सयोजक तथा श्री बाजोरिया जी सचालक हैं।

१४—सभाभवन

२५ आषाढ, १९५५ वि० (९ जुलाई १८९८) की बैठक में सभा का अपना भवन हो जाने के विषय मे सबसे पहला प्रस्ताव रखा गया। कार्यकर्ताओं की दृष्टि आरभ से ही कपनी बाग के उस अश की ओर थी जो विश्वेश्वरगज की ओर था। स० १९५९ वि० तक सभा का कार्य बहुत बढ गया था और सभा के सचालक [illegible]

की आवश्यकता विशेष रूप से अनुभव करने लगे थे। प्रबंध-समिति ने अपनी १० वैशाख १९५७ वि० (२३ अप्रैल, १९००) की बैठक में निश्चय किया कि :—

इस भूमि को प्राप्त करने का उद्योग किया जाय, कंपनी बाग का एक नक्शा बनवाया जाय और इस विषय में सब प्रकार का उद्योग करने के लिये निम्नलिखित महाशयों को पूर्ण अधिकार दिया जाय,—१. बाबू गोविंददास, २. बाबू रामप्रसाद चौधरी, ३. बाबू राधाकृष्णदास, ४. बाबू श्यामसुंदरदास, ५. राय शिवप्रसाद (मंत्री)।

४. सभा के संचालकों को तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट रेडिचे महोदय का सहयोग प्राप्त था। ये रेवरेंड एडविन ग्रीव्स और श्री गोविंददास के उद्योग और रेडिचे महोदय के सहयोग का ही फल था कि सभा को १८० फुट लंबी और १३७ फुट चौड़ी कंपनी बाग की भूमि ३५००) में मिल गई। ६ पौष, १९५९ वि० (२१ दिसंबर, १९०२) को श्रीमान् काशीनरेश महाराज सर प्रभुनारायण सिंह बहादुर जी० सी० आई० ई० के करकमलों द्वारा सभा के भवन का शिलान्यास करा दिया गया। एक वर्ष के उपरांत सभाभवन बन जाने पर बृहस्पतिवार ६ फाल्गुन, १९६० वि० (१८ फरवरी, १९०४) को सभाका गृहप्रवेशोत्सव बड़े समारोह के साथ सभाभवन के सामने विशाल मंडप में मनाया गया। पर ज्यों ज्यों सभा का कार्य बढ़ता गया, स्थान की कमी बहुत अधिक खटकने लगी। स्थान की इतनी कमी थी कि सभा को बिक्री की पुस्तकों का स्टाक रखने के लिये भैरव बावली में एक मकान किराए पर लेना पड़ा। सं० १९८३ में सभा ने इस अभाव की पूर्ति का आयोजन आरंभ कर दिया।

सभा अब तक भूमि, भवन-निर्माण और मेज कुरसी आदि में सब मिलाकर ३६०००) खर्च कर चुकी थी। स्थान की कमी दूर करने के लिये अभी कुछ और भूमि खरीदने की आवश्यकता थी, जिसमें १००००) खर्च होने का अनुमान किया गया था। भवन-परिवर्द्धन के लिये २७०००), नया हाल बनवाने के लिये ६८०००), लकड़ी के सामान के लिये १६०००) और अन्य फुटकल कार्यों के लिये ३४००)। इस प्रकार सब मिलाकर १२४४००) की सभा को और आवश्यकता थी। यदि ३६०००) भी इसमें जोड़ दिया जाय, तो सभाभवन पर सभा का १६३४००) लगना निश्चित था। सभा ने इसके लिये प्रांतीय सरकार को लिखा था और प्रार्थना की, कि वह इस रकम का आधा सभा को प्रदान करने की कृपा करे। इस कार्य के निमित्त सर्व श्री गौरीशंकर प्रसाद, रामानारायण मिश्र तथा श्यामसुंदरदास नैनीताल गए और वहाँ युक्त प्रदेश के शिक्षा-विभाग के अध्यक्ष श्री ए० एच० मेकेंजी तथा शिक्षा मंत्री राय राजेश्वरबली से मिले और उनके सामने सभा की आवश्यकताएँ उपस्थित करके सरकार से सहायता दिलाने की प्रार्थना की। यह यात्रा बड़ी सफल रही। सन् १९२७-२८ के बजट में इस काम के लिये २३४००) की सहायता सभा को देने का निश्चय हुआ। अब तक जनता से भी ६०००) इस कार्य के लिये प्राप्त हो चुके थे। शेष की प्राप्ति के लिये भी सभा ने यत्न करना आरंभ कर दिया था।

सभा भवन के कुछ भाग को दो मंजिला बनाने का जो विचार किया गया था, वह संवत् १९८४ में पूरा हो गया और आवश्यकतानुसार लकड़ी का सामान भी बनवा लिया

गया। इस वर्ष प्रांतीय सरकार से भी २२५००) सभा को मिल गए। हाल बन जाने पर स्थान की कमी बहुत कुछ दूर हो गई थी। पर पुस्तकालय के लिये जितना स्थान दिया गया था, सं० १९८६ आते आते वह भी कम पड़ गया। क्योंकि श्री रायकृष्णदास की कृपा से भारत-कला-परिषद् सभा में संमिलित कर दी गई और उसके 'कलाभवन' की सामग्री से सभाभवन के ऊपरी भाग का सारा स्थान भर गया। सभाभवन के पीछेवाली भूमि जो ४०००) में मोल ली गई थी, नए बड़े हाल के लिये काफी नहीं थी। पर यह कमी भी श्री रायकृष्णजी की उदारता से संवत् १९८५ में दूर हो गई। उन्होंने सभा की भूमि के दक्षिणपूर्व की ओर का १५०००) मूल्य का अपना मकान सभा को दान कर दिया। इस मकान के मिल जाने से नए हाल के लिये सभा के पास पर्याप्त भूमि हो गई।

हिंदी शब्दसागर की समाप्ति के उपलक्ष्य में इसी वर्ष वसंतपञ्चमी के अवसर पर २ और ३ फाल्गुन सं० १९५५ वि० (१४ और १५ फरवरी १९२९) को सभा ने कोशोत्सव मनाने का आयोजन किया और यह भी निश्चय किया कि नई खरीदी-हुई जमीन पर जो नया हाल बनेगा, उसका शिलान्यास भी इसी दिन महामना श्री मदनमोहन मालवीय जी के कर-कमलों द्वारा सम्पन्न करा लिया जायगा। निश्चयानुसार गुरुवार, २ फाल्गुन, सं० १९८५ वि० (१४ फरवरी, १९२९) को वसतपंचमी के दिन प्रातःकाल महामना मालवीय जी ने शास्त्र-विधि से नए हाल का शिलान्यास संस्कार अनेक गण्य मान्य विद्वानों की उपस्थिति में संपन्न किया। एक प्रस्तर मंजूषा में ताम्रपत्र, सभा की नियमावली, कोशोत्सव का पूरा कार्यक्रम, नागरीप्रचारिणी पत्रिका की एक प्रति, मध्य हिंदी व्याकरण, सभा का ३५ वर्षों का कार्य विवरण और प्रचलित सिक्के रखे गए और वह मंजूषा नींव में रख दी गई। इस मंजूषा में जो ताम्रपत्र रखा गया है उस पर खुदा है—

'भारतेंदु हरिश्चंद्र के गोलोकवास के आठ वर्ष के उपरांत हिंदी भाषा और नागरी-लिपि के प्रचार, प्रसार, तथा उन्नति के उद्देश्य से सं० १९५० में काशी नागरीप्रचारिणी सभा की स्थापना हुई। उसने अपने ३९ वर्ष के जीवन में अब तक हिंदी भाषा और नागरीलिपि की अमूल्य तथा गौरवप्रद सेवा की है। इस काल में इस सभा के उद्योग से हिंदी भाषा ने राष्ट्रभाषा और देवनागरी लिपि ने राष्ट्रलिपि बनने की योग्यता प्राप्त कर ली है, और शनैः शनैः सभी प्रांत उसको उस रूप में ग्रहण करते जा रहे हैं। हिंदी के पठन-पाठन में आशातीत उन्नति हुई है। उसका अध्ययन, अध्यापन वर्तमान विश्वविद्यालयों की उच्चतम कक्षाओं में भी होता है। उसके गद्य और पद्य साहित्य की भाषा प्रायः एक ही रही और उसकी अक्षयनिधि नित्य नए रत्नों से सुशोभित होती जाती है। उसका प्रचार दूरस्थ द्रविड़ तथा कामरूप प्रांतों तक में हो रहा है। अब हिंदी न जानना और उसका आदर न करना देश-काल की अनभिज्ञता का सूचक माना जाता है। इस सभा का पहला भवन जो इस नवीन भवनके दक्षिण ओर है सं० १९६० में बना था। आज माघ [illegible] गुरुवार, संवत् १९८५ को इसके दूसरे नवीन भवन का शिलान्यास संस्कार देश के [illegible] पंडित मदनमोहन मालवीय जी द्वारा संपन्न हुआ है। ईश्वर इस सभा की नित्य उन्नति करे। हिंदी भाषा तथा नागरीलिपी का स्वावलंबी भारतवर्ष में अखंड [illegible] हो और [illegible] भारतवासीमात्र एकता के सूत्र में बँधकर राष्ट्र के निर्माण में [illegible] प्रयत्न [illegible]

श्यामसुंदरदास—सभापति

माधवप्रसाद खन्ना—प्रधान मंत्री'

सं० १९९५ में श्री मुरारीलाल केडिया ने अपनी स्वर्गीया बहन और बहनोई के स्मारक स्वरूप कलाभवन के मूर्ति-विभाग के आंगन को पाटने और उसे गैलरी के रूप में परिणत करा देने के लिये १००१) सभा को प्रदान किया। इससे आधुनिक ढंग की प्राकृतिक तथा कृत्रिम प्रकाशयुक्त सुंदर गैलरी तैयार करा ली गई, और इस नए हाल का नाम 'श्री काशीदेई चंडीप्रसाद मूर्तिमंदिर रखा गया। इस नए हाल से कलाभवन का कुछ काम तो चल गया, पर नए भवन की कमी ज्यों की त्यों बनी रही।

सभा भवन के पूर्व की ओर गोदाम के पास एक स्टाक रूम भी सं० १९९७ में बनाया गया। संवत् १९९८ (१३ जुलाई, १९४१) की बैठक में मूर्ति मंदिर के ऊपर एक बड़ा कमरा बनवाने के लिये कुछ रुपये की स्वीकृति सभा ने दी और उसका कार्य आरंभ कर दिया गया। सं० १९९८ में इस कार्य पर ७५०) व्यय हुए, किंतु इतने से पूरा कमरा न बन सका और अर्थाभाव के कारण कुछ दिनों तक यह कार्य रोकना पड़ा। सं १९९९ में ७७५) और व्यय हुए तब कहीं यह कमरा बनकर तैयार हुआ।

स्थान की कमी का अनुभव उत्तरोत्तर हो रहा था, किंतु आर्थिक स्थिति अनुकूल न होने के कारण इस दिशा में कोई व्यावहारिक प्रयत्न शीघ्र नहीं हो सका। संवत् २००४ में ६०००) के व्यय से पुस्तकों के भांडार के लिये एक कमरा बनवाने का निश्चय किया गया था और आय-व्ययक में इसका संनिवेशन भी करा दिया गया था, किंतु अर्थ की व्यवस्था न होने के कारण उस वर्ष यह कार्य नहीं हो सका। सं० २००६ में पूर्व की ओर वाला खपरैल का गोदाम तोड़कर ४३६२=)। से एक कमरा बनवाया गया। कई वर्षों से सभा की इच्छा थी कि उसका अपना निजी मुद्रणालय हो, पर आर्थिक प्रतिकूलता के कारण यह कार्य भी टलता आ रहा था। सं० २००७ में इसकी स्थापना हुई और ५१७०॥—) के व्यय से उत्तर-पूरब की ओर कुएँ के पासवाली भूमि पर उसके लिये एक बड़ा कमरा बनवाया गया।

संवत् २००७ में भारत कला भवन हिंदू विश्वविद्यालय को हस्तांतरित कर दिया गया। पिछले १०–१५ वर्षों से इस संग्रहालय का प्रसार जिस तीव्र गति से होता चल रहा था, उसके कारण सभाभवन का समस्त ऊपरी खंड तथा नीचे का भी पर्याप्त अंश उसके लिये छोटा प्रतीत होने लगा था। कलाभवन के विश्वविद्यालय में चले जाने के कारण सभा के स्थानाभाव की समस्या कुछ दिनों के लिये सुलझ गई थी, पर अब पुनः स्थान-संकोच के कारण असुविधा होने लगी है। मुद्रणालय के लिये जो कमरा उत्तर-पूरब की ओर बनवाया गया था, उसे संप्रति जिल्दबंदी विभाग के लिये दे दिया गया है, तथा मुद्रणालय कलाभवन के मूर्तिमंदिर वाले कमरों में स्थानांतरित कर दिया गया है। ऊपरी खंडों के कुछ अंश को प्रकाशन-भांडार के लिये ले लिया गया है, तथा खपरैलवाले गोदाम के स्थान पर बने कमरे में संप्रति संकेतलिपि विद्यालय है। ऊपर के जिस बड़े हाल में कला-भवन का चित्रमंदिर था, वह समय समय पर होनेवाले सभा के आयोजनों के उपयोग में आ रहा है। मूर्तिमंदिर के ऊपरवाला अंश पुस्तकालय के उपयोग में है।

फिर भी स्थान की कमी अभी बनी हुई है। मुद्रणालय के विकास के लिये इस समय कोई अतिरिक्त स्थान सभा के पास नहीं है। इस बीच पुस्तकालय का जितना विकास हुआ है, और विशेषत जिस रूप म इतने बडे पुस्तकालय को सज्जित और व्यवस्थित रखने की आवश्यकता है, उसे देखते हुए समूचा भवन अकेले उसी के लिये पर्याप्त नहीं प्रतीत होता। खोज विभाग, पत्रिका विभाग, साहित्य विभाग, मुद्रणालय आदि के लिये जो स्थान सप्रति निश्चित हैं, वे अत्यत असुविधाजनक हैं। महामना माल्वीय जी ने जिस नवीन भवन की नीव डाली थी, उसका कोई कार्य भी द्रव्याभाव के कारण नही हो सका। सवत् १९९७ में सभा ने स्व० आचार्य रामचद्र शुक्ल की स्मृति में एक अतिथिशाला बनवाने का निश्चय किया था, पर खेद है कि इसके लिये कोई प्रभावकारी सहायता नहीं मिल सकी। बाहर से आनेवाले विद्वानो, अनुसधायको तथा सभा के अतिथियो के लिये सभा के पास कोई स्थान न होना सचमुच बडे परिताप की बात है।

सौभाग्य की बात है कि इस वर्ष अतिथिशाला के निर्माण के लिये कलकत्ते के श्री सेठ राजकुमार जी भुवालका ने १५०००) का दान देना स्वीकार कर लिया है और निकट भविष्य म ही अतिथि शाला भी बन जायगी।

१५—'सरस्वती'

'सरस्वती' का प्रकाशन भी सभा के महत्वपूर्ण कार्यो में से है। हिंदी जगत् मे 'सरस्वती' अपने ढग की सबसे प्राचीन मासिक पत्रिका है। मासिक पत्रिकाओ के इतिहास मे 'सरस्वती' ने एक नवीन युग का प्रवर्तन किया है। किंतु यह बात बहुत कम लोग जानते हैं कि 'सरस्वती' की स्थापना भी सभा के ही अनुमोदन पर उसी की सहायता से और उसी के हाथों से हुई है। सवत् १९५६ में इडियन प्रेस के स्वामी के अनुरोध पर सभा ने पत्रिका के लिये सर्वश्री श्यामसुदरदास, राधाकृष्णदास, जगन्नाथदास 'रत्नाकर', कार्तिकप्रसाद और किशोरीलाल गोस्वामी इन पाच विद्वानों की एक सपादक समिति नियत की थी। इसी समिति के सपादकत्व म सभा के अनुमोदन पर सवत् १९५६ (जनवरी १९०० ई०) मे इडियन प्रेस से 'सरस्वती' प्रकाशित हुई। उसके मुखपृष्ठ पर 'काशी नागरीप्रचारिणी सभा के अनुमोदन से प्रतिष्ठित' छपा रहता था और सपादक समिति के सदस्यो के नाम इस क्रम से दिए जाते थे।

सम्पादक समिति

१—बा० कार्त्तिकप्रसाद खत्री
२—प० किशोरीलाल गोस्वामी
३—बा० जगन्नाथदास बी० ए०
४—बा० राधाकृष्णदास
५—बा० श्यामसुदरदास बी० ए०

प्रथम वर्ष में 'सरस्वती' का सपादन उक्त संपादक समिति करती रही। दूसरे वर्ष से सभा ने यह कार्य अकेले श्री श्यामसुदरदास को सौंप दिया, जो तीसरे वर्ष तक 'सरस्वती'

का संपादन बड़ी सफलता के साथ करते रहे। संवत् १९५९ में (चौथे वर्ष; जनवरी, १९०३) से श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी उसके संपादक नियत हुए। द्विवेदी जी के संपादकत्व में भी तीन वर्ष (सन् १९०३ से १९०५) तक 'सरस्वती' का संबंध सभा से पूर्ववत ही बना रहा, परंतु उसके बाद किसी कारणवश टूट गया। यह पत्रिका अब तक नियमित रूप से प्रकाशित हो रही है।

१६—हिंदी साहित्य संमेलन

हिंदी साहित्य संमेलन हिंदी प्रचार का कार्य करनेवाली देश की प्रधान संस्था है। हिंदी प्रचार, साहित्य सेवा और अपनी परीक्षाओं के लिये वह समस्त भारतवर्ष में ही नहीं, विदेशों में भी पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुका है। किंतु इस बात को संभवतः सब लोग नहीं जानते कि हिंदी साहित्य संमेलन की जननी 'नागरीप्रचारिणी सभा' है। सभा की प्रबंधसमिति ने ही सं० १९६७ में श्री श्यामसुंदरदास के प्रस्ताव पर हिंदी साहित्य संमेलन आयोजित करने का निश्चय किया था। संमेलन का यह पहला अधिवेशन महामना मालवीय जी के सभापतित्व में २४, २५ और २६ आश्विन, सं० १९६७ (१०, ११ और १२ अक्टूबर १९१०) को विशेष समारोहपूर्वक नागरीप्रचारिणी सभा में हुआ। विभिन्न प्रांतों के ३०० प्रतिनिधि इसमें संमिलित हुए थे। दैनिक, अर्ध साप्ताहिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक और त्रैमासिक पत्रों के ४२ संपादक और सहकारी संपादक इस अवसर पर पधारे थे।

संमेलन में पढ़े जाने के लिये अनेक विद्वानों के लेख आए थे। कितने ही विद्वान् अपने लेखों के साथ स्वयं उपस्थित हुए थे। इनमें कुछ लेख तो पढ़े जा सके और कुछ समय न मिलने के कारण रह गए। इसलिए संमेलन की स्वागतकारिणी समिति ने बाद में सब लेखों को पुस्तकाकार छपवाकर प्रकाशित कर दिया।

हिंदी प्रेमियों के इस प्रथम मेले की आयोजना में सभा को आशातीत सफलता हुई और संमेलन सब प्रकार से सफल रहा। इसका दूसरा अधिवेशन प्रयाग में वहाँ की नागरी-प्रवर्द्धिनी सभा की ओर से संवत् १९६८ के आश्विन मास में होना निश्चित हुआ। वहीं से इसे एक पृथक् अखिल भारतवर्षीय संस्था का रूप मिला।

सं० १९९६ में संमेलन का अट्ठाईसवाँ अधिवेशन भी काशी में ही नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा आमंत्रित किया गया था। इस संमेलन के सभापति श्री अंबिकाप्रसाद वाजपेयी थे और स्वागताध्यक्ष महामना श्री मदनमोहन मालवीय।

१७—पंचांग शोध

जिस समय सभा की ओर से विक्रम की द्विसहस्राब्दी मनाने का निश्चय किया गया था, उसी समय यह भी निश्चय हुआ था कि इस उत्सव के कार्यक्रम में प्रचलित पंचांग के, जो विक्रम का सबसे बड़ा संस्मारक है, संशोधन को भी स्थान दिया जाय। इस संबंध में सभा के सभापति श्री संपूर्णानंद ने २९ माघ, १९९८ को पंचांग संबंधी नीचे लिखे कुछ प्रश्न विशेष रूप से विचार के लिये उपस्थित किए:—

१. संक्रांति की जो तिथियाँ पंचागों में दी रहती हैं और हमारे घरों में मनाई जाती हैं, वे दृश्यगणित की तिथियों से, जो वस्तुस्थिति पर निर्भर हैं, नहीं मिलतीं। वर्तमान संवत् के लिये यह अंतर इस प्रकार है:—

संक्रांति	दृश्य	विश्व पंचांगगत
मेष	२३ मार्च १९४१	१३ अप्रैल १९४१
कर्क	२१ जून १९४१	१६ जुलाई १९४१
तुला	२३ सितंबर १९४१	१६ अक्टूबर १९४१
मकर	२४ दिसंबर १९४१	१३ जनवरी १९४१

२. चंद्र मास कहीं शुक्ल पक्ष से आरंभ होते हैं, कहीं कृष्ण पक्ष से। श्रीकृष्ण जन्माष्टमी जिस दिन होती है, उसको कहीं तो भाद्र कृष्ण अष्टमी कहते हैं, कहीं श्रावण कृष्ण अष्टमी; शुक्ल पक्ष में नाम मिल जाता है।

३. पुराने ज्योतिष ग्रंथों में ग्रहों की गतिविधि के संबंध में जो अंक दिए गए हैं, उनके अनुसार ग्रहों के जो स्थान आते हैं, वे उन स्थानों से भिन्न हैं, जहाँ पर ग्रह सचमुच हैं। एक दो उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जायगी—

सौर वर्ष का मान

आर्य भट्ट

३६५ दिन ६ घंटा १२ मिनट २९. ६४ से०

सूर्यसिद्धांत

३६५ दिन ६ घंटा १२ मिनट ३६. ५६ से०

अर्वाचीन

३६५ दिन ६ घंटा ९ मिनट ९ से०

यदि दशमलव के दूसरे तीसरे स्थान में भी कुछ भूल हो, तो वह सैकड़ों वर्षों में बड़ा रूप धारण कर लेती है। हमारे ज्योतिषी इस बात को जानते हैं। अब महत्त्व का प्रश्न यह है कि फलित ज्योतिष के लिये इन दृश्य स्थानों से काम लिया जाय या अदृश्य से। इस विषय में बड़ा मतभेद है।

राजाश्रय के बिना ज्योतिष में यह सब गड़बड़ी आ गई है और इसका सुधरना भी कठिन है, फिर भी प्रयत्न करना चाहिए। मुझे विश्वास होता है कि इस काम में हमको विद्वानों के अतिरिक्त नरेशों और धनिकों का भी सहयोग प्राप्त हो सकेगा। पर्याप्त प्रचार होना चाहिए।

इसलिये मेरा प्रस्ताव है कि कुछ विद्वानों की एक समिति बुलाई जाय, वह विचार करे कि (१) इन प्रश्नों पर विचार करना उचित और व्यावहारिक है या नहीं, (२) इनके विचार के लिये काशी में एक संमेलन बुलाना ठीक होगा या नहीं, (३) यदि ठीक हो तो उसमें किस किस को बुलाया जाय, (४) संमेलन के सामने कौन कौन से प्रश्न रखे जायँ और (५) संमेलन का आयोजन करने और उसकी रिपोर्ट निकालने में कितना व्यय होगा।

'१४ चैत्र १९९८ को सभा की प्रबंध समिति ने एक पंचांग शोध समिति नियुक्त की जिसके संयोजक श्री संपूर्णानंद जी और निम्नलिखित सज्जन सदस्य बनाए गए—

१. सर्वश्री रामव्यास ज्योतिषी, हिं० वि० वि०, काशी।
२. बलदेव मिश्र ज्यो०, श्री सरस्वती भवन, काशी।
३. रघुनाथ शर्मा ज्यो०, नई बस्ती, काशी।
४. डाक्टर गोरखप्रसाद, प्रयाग वि० वि० प्रयाग।
५. डाक्टर अवधेशनारायण सिंह, गणित विभाग, लखनऊ वि०, लखनऊ।
६. महावीरप्रसाद श्रीवास्तव, फर्रुखाबाद।
७. रा० ब० कमलाकर द्विवेदी, खजुरी, बनारस।
८. पद्माकर द्विवेदी, खजुरी, काशी।
९. चंडीप्रसाद जी, चेतगंज, काशी।
१०. हजारीप्रसाद द्विवेदी, शांतिनिकेतन।

प्रारंभिक विचार विनिमय के बाद समिति की एक बैठक २६ ज्येष्ठ १९९९ को और दूसरी ५ मार्गशीर्ष, १९९९ को हुई। संयोजक के जेल चले जाने के कारण उनका भार श्री पं० रामव्यास जी ने स्वीकार कर लिया था। समिति ने मूलबिंदु, अयनांश, वर्षमान आदि कई प्रश्नों पर विचार करने के उपरांत यह निश्चय किया कि निम्नलिखित प्रश्नों पर विद्वानों की संमति माँगी जाय और सब संमतियों के आ जाने पर समिति की बैठक फिर की जाय।

पंचांग शोधन का स्वरूप-निर्णय, अर्थात् पंचांग में किस प्रकार के परिवर्तन हों, इस संबंध में निम्नलिखित बातें देश के विद्वानों के समक्ष रखी गईं—

क. पंचांग दृश्य गणनानुसार बनना चाहिए या प्राचीन गणनानुसार।
ख. यदि प्राचीन गणनानुसार बने तो किस सिद्धांत के अनुसार और क्यों?—या
ग. यदि आपके मतानुसार किसी उपायांतर का अवलंबन करना ठीक हो तो उसका क्या स्वरूप हो?
घ. यदि दृश्य गणनानुसार पंचांग बनेंगे तो उनसे व्रतादिक धार्मिक कृत्यों के संबंध में अथवा धर्मशास्त्रियों की दृष्टि से जो बाधाएँ उपस्थित होंगी, उनके निवारण के लिये आपकी संमति में क्या उपाय होना चाहिए?

इन पत्रों के उत्तर में लगभग ३५ विद्वानों की संमतियाँ तथा अनेकों के बृहत् लेख आए। इनमें अधिकांश की संमति थी कि व्रतोपवास के लिये सूर्य सिद्धांतानुसार तिथि, नक्षत्र-योग बनाए जायँ और दृश्य ग्रहण, शृंगोन्नत्यादि के लिये दृश्य गणित का व्यवहार हो। कुछ लोगों का मत दृश्य गणनानुसार पंचांग बनाने के पक्ष में भी था।

समिति की अंतिम बैठक ३ माघ, १९९९ को हुई। उपस्थित सदस्यों में से तीन अर्थात् सर्वश्री चंडीप्रसाद, डाक्टर गोरखप्रसाद और अवधेशनारायण सिंह इस मत के थे कि पंचांग सर्वथा दृश्य गणना के अनुसार बनाया जाय। दूसरी ओर सर्वश्री रामव्यास पांडेय और पद्माकर द्विवेदी का कहना था कि सूर्य सिद्धांत का अनुसरण ही होता रहे।

श्रीबलदेव मिश्र की यह संमति थी कि पंचांग का आधार सूर्य सिद्धांत ही रहे, परंतु तद्गत गणनाओं में बीज संस्कार किया जाय और ग्रहों का उदयास्त आदि दृश्य गणित के अनुसार दिया जाय।

ऐसे प्रश्न पर जिनकी सहज जटिलता को धार्मिक विश्वासों और सैकड़ों वर्षों की गतानुगति से उत्पन्न आग्रहों ने पुष्ट कर रखा है, सहसा ऐकमत्य की आशा भी नहीं थी। परंतु इससे भी संतोषजनक बात यह हुई कि जनता का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ। किंतु देश की राजनीतिक परिस्थिति उन दिनों ऐसी थी कि इस ओर कोई विशेष प्रभावकारी कार्य नहीं हो सका। अंत में सभा ने यह निश्चय किया कि इस समय ऐसी सारणियाँ प्रकाशित कर दी जायँ, जिनमें ग्रहों का स्पष्ट भागांश, शर, लग्न परम क्रांति, बिंब आदि का ज्ञान ठीक ठीक हो सके। तदनुसार श्री डा० गोरखप्रसाद द्वारा लिखित चंद्रमा तथा सूर्य की सारणियाँ क्रमानुसार संवत् २००२ तथा २००५ में प्रकाशित कर दी गईं।

१८—भारत-कला-भवन

कविकुलगुरु रवींद्रनाथ ठाकुर के सभापतित्व में संवत् १६७७ में (१ जनवरी १९२० ई०) काशी में 'भारत-कला परिषद्' नामक एक संस्था की स्थापना की गई थी, जिसका मुख्य उद्देश्य कलापूर्ण वस्तुओं के संग्रहालय एवं चित्र तथा संगीत शिक्षालय के माध्यम से राष्ट्र की कला भावना को उन्नत और विकसित करना था। आगे चलकर आर्थिक कठिनाइयों के कारण संग्रहालय के साथ चित्र और संगीत विद्यालय चलाना संभव नहीं जान पड़ा, फलतः संवत् १६८० में कवींद्र के आदेशानुसार सारी शक्तियाँ केवल संग्रहालय में केंद्रित कर दी गईं। पर अपना स्थान न होने के कारण परिषद् को बड़ी अड़चन का सामना करना पड़ता था। संवत् १९८३ से परिषद् के प्रदर्शन का कार्य स्थानीय सेंट्रल हिंदू स्कूल में चलने लगा था। किंतु ज्यों ज्यों समय बीतता जाता था, परिषद् का संग्रह बढ़ता जाता था। दो तीन वर्षों में ही हिंदू स्कूल जैसी शिक्षा-संस्था का संरक्षण परिषद् के लिये संकुचित प्रतीत होने लगा। उन्हीं दिनों सभा में भी एक संग्रहालय खोलने की चर्चा चल रही थी। संवत् १९८५ के अंत में सभा के अधिकारियों ने परिषद् के मंत्री श्री रायकृष्णदास जी से अनुरोध किया कि भारत कला-परिषद् के संग्राहालय को सभा में संमिलित कर दें। तदनुसार उक्त संग्रहालय 'भारत-कला भवन' के नाम से संवत् १९८६ में सभा में आ गया।

इस संग्रहालय में पर्याप्त सामग्री थी, जो सब धीरे धीरे सभाभवन के नए बने हुए ऊपरी भाग में पहुँचा दी गई। इस सामग्री का मूल्य उस समय लगभग एक लाख कूता गया था। इस संग्रहालय को अपने साथ संमिलित करने के लिये बड़ी बड़ी संस्थाओं के संचालक उत्सुक थे, किंतु सर्वश्री रायकृष्णदास और श्यामसुंदरदास के उद्योग से काशी नागरीप्रचारिणी सभा को ही प्राप्त हुआ।

इसी वर्ष सभा की ओर से कलाभवन के लिये एक अपील प्रकाशित कराई गई, जिसमें सर्वसाधारण का ध्यान इस बात की ओर आकृष्ट किया गया और उनसे आग्रह किया गया

कि कलाभवन के संग्रह को सर्वांगपूर्ण बनाने में चित्रों, सिक्कों, कलापूर्ण बर्तन-भाँड़ों, अलंकृत वस्त्रों, मूर्तियों आदि का जो संग्रह घरों में पड़ा पड़ा नष्ट हो रहा है, अथवा विदेशी व्यापारियों के कारण सात समुद्र पार चला जा रहा है, उसकी सुरक्षा के लिये कलाभवन की सहायता करें। यह अपील महात्मा गांधी ने अपने 'यंग इंडिया' में भी प्रकाशित की थी और अपनी टिप्पणी में उसका अनुमोदन तथा समर्थन किया था। इस अपील के फलस्वरूप पहले वर्ष से ही कलाभवन को बहुमूल्य चित्रों, चित्रित ग्रंथों, सिक्कों, मूर्तियों के दान प्राप्त होने लगे। संवत् १९८९ में रूस के विख्यात चित्रकार श्री निकोलस डि रोरिक ने अपने बारह मौलिक चित्र कलाभवन को प्रदान किए। संवत् १९९१ में कलाभवन की ओर से बैराट नामक स्थान में खुदाई का कार्य आरंभ करने का विचार किया गया। यह स्थान काशी से उत्तर-पूरब की ओर लगभग २२ मील की दूरी पर है, जहाँ मीलों तक अत्यंत प्राचीन टीले फैले हुए हैं। इन टीलों की प्राचीनता इसी से स्पष्ट है कि इनकी ऊपरी सतह पर ही मौर्यकालीन मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े, शुंगकालीन वस्तुएँ, कुशनकालीन सिक्के आदि पड़े हुए मिलते हैं। इस संबंध में यद्यपि कलाभवन की ओर से पर्याप्त उद्योग किया गया और भारतीय पुरातत्व विभाग के अधिकारियों ने भी कलाभवन के उद्देश्यों के प्रति पर्याप्त सहानुभूति प्रकट की, किंतु विशेषज्ञों के अभाव में इस संकल्प को व्यावहारिक रूप नहीं दिया जा सका। संवत् १९९२ में कलाभवन ने मेघदूत का खड़ी बोली में श्री केशवप्रसाद मिश्र कृत पद्यानुवाद प्रकाशित किया। इस सुंदर ग्रंथ में ठाकुर शैली के प्रसिद्ध चित्रकार श्री शैलेंद्र दे के बनाए हुए १२ रंगीन और १ सादा चित्र दिए गए। संवत् १९९० में सभा ने आचार्य महावीरप्रसाद जी द्विवेदी को जो अभिनंदन ग्रंथ समर्पित किया, उसकी सजावट की जैसी अभूतपूर्व योजना उक्त ग्रंथों में हुई, वैसी आजतक हिंदी के ही नहीं अन्य भाषाओं के ग्रंथों में भी दुर्लभ है।

कलाभवन का संग्रह जिस गति से दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था, उसी गति से उसके लिये अर्थ की कठिनाई भी बढ़ती जा रही थी। भारतकला परिषद् और सभा के बीच जो समझौता हुआ था, उसके अनुसार सभा ६००) वार्षिक कलाभवन पर व्यय करने के लिये वचनबद्ध थी किंतु ८ वर्षों में (सन् १९२९ से १९३६ तक) कलाभवन के मद में वह १३८३१ रु० ६ आना व्यय कर चुकी थी, जिनमें से ४८३३ रु० ९ आना ७ पाई चंदे से प्राप्त हुए थे, और शेष ८९९६ रु० १२ आ० सभा ने अपने पास से व्यय किए थे। इस प्रकार सभा निश्चित वार्षिक व्यय से कहीं अधिक व्यय कलाभवन पर कर रही थी। कलाभवन की उपयोगिता को देखते हुए, यह अनिवार्य था कि उसका व्यय प्रतिवर्ष बढ़ता जाय। किंतु अपनी प्रतिकूल आर्थिक स्थिति के कारण यह व्यय-भार उठाना दिन प्रतिदिन सभा की शक्ति के बाहर होता जा रहा था। अतएव सं० १९९३ में यह संग्रह कलापरिषद् को लौटाने के प्रश्न पर सभा ने विचार किया। किंतु भारत-कला परिषद् का वैधानिक अस्तित्व निश्चित न होने के कारण वैसा नहीं हो सका। इस प्रश्न को लेकर कलाभवन के कार्यों में जो गतिरोध आ गया था वह संवत् १९९४ के मध्य तक बना रहा, किंतु तदनंतर वह दूर हो गया और संग्रह आदि का कार्य पुनः जोरों से चल निकला। संवत् १९९५ में कलाभवन को बहुत अधिक संख्या में वस्तुएँ प्राप्त हुईं, जिनमें भारत-सरकार द्वारा प्रदत्त सारनाथ की

प्रस्तर-सामग्री प्रमुख थी। इसी वर्ष कलाभवन ने भारतीय-इतिहास-परिषद् के अधिवेशन के अवसर पर एक प्रदर्शनी का आयोजन किया, जिसमें यहाँ की रक्षण-विधि तथा प्रदर्शन की रीति की मुक्त कंठ से प्रशंसा की गई। संवत् १९९६ में भी अनेक उत्कृष्ट वस्तुएँ कलाभवन के संग्रह में आईं। इसी वर्ष स्थानीय काशी स्टेशन और राजघाट के किले का मध्यवर्ती भूभाग रेलवे की ओर से खोदा जाना आरंभ हुआ। इस स्थान से अनेक महत्वपूर्ण वस्तुएँ मिलीं, जिनके संरक्षण और प्रदर्शन के लिये कलाभवन में एक स्वतंत्र विभाग खोल दिया गया। संवत् १९९८ में पुरातत्व विभाग ने मोहेनजोदड़ो से प्राप्त वस्तुओं का एक अच्छा सेट प्रदान किया। सं० १९९९ से प्रांतीय सरकार भी कलाभवन को २५००) वार्षिक स्थायी सहायता देने लगी।

अपनी अर्द्धशताब्दी के सिलसिले में सभा ने अपने विभिन्न विभागों को विकसित और संपुष्ट करने का जो उद्योग आरंभ किया था, उसके परिणाम स्वरूप संवत् २००० से ही कलाभवन के विभिन्न विभागों में एक ओर तो दान, परिवर्तन, क्रय आदि साधनों से उत्कृष्ट सामग्री का संग्रह होने लगा और दूसरी ओर उनके समुचित प्रदर्शन और संरक्षण की चेष्टा की जाने लगी। संवत् २००० में चित्रों की सजावट भी शैलीक्रम से करके उनपर हिंदी-अंग्रेजी दोनों भाषाओं में परिचय-पत्र लगाए गए। पहाड़ी तथा राजस्थानी चित्रों के पूर्व प्रदर्शित सेट के बदले पिछले २-३ वर्षों में संगृहीत चित्र प्रदर्शनार्थ लगा दिए गए। इसी वर्ष तालपत्र पर लिखी हुई १२ वीं शती की प्रज्ञापारमिता की सचित्र प्रति प्राप्त हुई, जिसमें कुल १२ चित्र थे तथा दोनों ओर के लकड़ी के पटरे भी चित्रित थे। पत्रों का माप २२$\frac{1}{2}$ इंच × २$\frac{1}{2}$ इंच है। इसी वर्ष कोशाम्बी, भीटा, मसौन, आदि ऐतिहासिक स्थानों से अब तक के प्राप्त रत्नों एवं उपरत्नों के प्राचीन मनकों को भी शो-केसों में पहली बार प्रदर्शित किया गया। संवत् २००० में ही म्युनिसपल म्यूजियम, इलाहाबाद से परिवर्तन में प्राप्त भारहुती यक्षिणी की शुंग-कालीन, एवं भारत-सरकार से प्राप्त गोवर्धनधारी कृष्ण की गुप्त-कालीन विशाल मूर्तियों के खंडित अंशों की मरम्मत एक कुशल कारीगर से कराई गई जिससे दर्शकों को मूर्तियों के वास्तविक रूप एवं सौंदर्य का आभास मिल सके। और चैत्र २००० (मार्च १९४४) में बुद्ध की दो गुप्तकालीन मूर्त्तियाँ कलाभवन के लिये खरीदीं गईं। इनमें बड़ी और विशिष्ट मूर्त्ति गुप्तपूर्व काल की थी। मूर्त्तिमंदिर की संपूर्ण सजावट भी बिलकुल नए सिरे से करके महत्वपूर्ण वस्तुओं पर परिचय-पत्र लगा दिए गए।

इसी वर्ष राजघाट मंदिर में राजघाट से प्राप्त समस्त वस्तुएँ स्थायी रूप से सजा दी गईं। इनके लिये पर्याप्त धन व्यय करके कितने ही नए शो-केस बनवाए गए। भारत सरकार से प्राप्त महाराज गोविंदचंद्र का सं० ११६७ वि० का दो पत्रों वाला ताम्रशासन भी पाठ की प्रतिलिपि एवं हिंदी अनुवाद सहित प्रदर्शित कर दिया गया। राजघाट की बहुत कुछ बड़ी बड़ी वस्तुएँ एवं इमारती पत्थर सभा भवन के पूरब ओर एक खुली वीथी में सजाए गए। मोहेंजोदड़ो की सामग्री पूरब के गलियारे से पश्चिम के गलियारे में स्थानांतरित कर दी गई और वहीं कलाभवन में संगृहीत सब स्थानों की उत्तमोत्तम मृण्मूर्तियाँ भी ६ नए कीमती शो-केसों में प्राप्ति-स्थान के अनुसार सजा दी गईं।

कला-भवन के साहित्य-विभाग की भी पर्याप्त उन्नति हुई। सभा के पुस्तकाध्यक्ष स्व० श्री शंभुनारायण जी चौबे के उद्योग से रामचरित मानस की सं० १७२१ वि० की एक हस्तलिखित प्रति प्राप्त हुई। यह प्रति मानस की ज्ञात प्रतियों में सबसे प्राचीन, अर्थात् गोसाईं जी के मृत्युकाल के ४१ वर्ष बाद की, तथा विशेष प्रामाणिक है। दूसरी महत्वपूर्ण वस्तु महर्षि दयानंद का आद्योपांत उन्हीं के हस्ताक्षर में शनिवार ता० १ मार्च १८७९ का पत्र था, जिसे उन्होंने श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा के नाम लिखा था।

युद्ध के कारण सं० २००० तक देश के प्रमुख संग्रहालय या तो बंद कर दिए गए थे, अथवा वहां से अध्ययन की सुविधाएँ हटा ली गई थीं; फलतः प्राचीन भारतीय कला एवं प्रत्नतत्त्व संबंधी विषयों का अध्ययन-अनुशीलन करनेवाले छात्रों की दृष्टि कला-भवन की ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक था। सच पूछा जाय तो कला-संबंधी सामग्री के संग्रह, संरक्षण तथा प्रदर्शन का मुख्य ध्येय यही है कि राष्ट्र की सुषुप्त कला-चेतना उद्बुद्ध हो। मूर्तियों के ढार, वस्तुओं के फोटो अथवा प्रतिकृतियों की मांग उत्तरोत्तर बढ़ते चलने के कारण यह आवश्यक प्रतीत होने लगा कि आधुनिकतम उपकरणों और यंत्रों से सज्जित वर्कशाप, स्टूडियो, अध्ययन-कक्ष आदि की व्यवस्था भी कला-भवन के लिये शीघ्र हो जानी चाहिए। इस राष्ट्रीय संग्रहालय के मूल में जो विशाल कल्पना थी, उसे इस रूप में मूर्तिमान होते देख एक ओर जहां स्वाभाविक पुलक और आनंद हो रहा था, दूसरी ओर अपने साधनों पर दृष्टिपात करने से यह कार्य असाध्य-साधन सा प्रतीत हो रहा था। फिर भी जो कुछ सुलभ था उसे लेकर कलाभवन अपने पथ पर आगे बढ़ता रहा।

संवत् २००१ में नवीन वस्तुओं का संग्रह यद्यपि परिमाण की दृष्टि से अधिक नहीं रहा, तथापि विशिष्टता की दृष्टि से प्रत्येक उल्लेखनीय वस्तुएं आईं, जिनमें उड़ीसा शैली के गीत-गोविंद के पांच चित्र, दकनी शैली के रागमाला के इक्कीस चित्र, छः नेपाली चित्रपट और दो नेपाली काष्ठमूर्त्तियां प्रमुख थीं। स्व० उस्ताद रामप्रसाद के पुत्र श्री शारदाप्रसाद द्वारा १५ वीं शती से लेकर १८ वीं शती तक के एक सौ विशिष्ट भारतीय पुरुषों की एक चित्र-माला बनवाने का कार्य भी इस वर्ष आरंभ किया गया। कलाभवन के साहित्य-विभाग में हिंदी की सभी प्रकार की पत्र-पत्रिकाओं की प्रथम संख्या तथा महत्वपूर्ण लेखकों की रचनाओं की पांडुलिपियां रखने की व्यवस्था थी। स्थान-संकोच के कारण इस विभाग की सामग्री प्रायः बंद रहा करती थी, किंतु इस वर्ष से इस विभाग की चुनी हुई सामग्री के प्रदर्शन की भी व्यवस्था कर दी गई। कलाभवन के उप-संग्रहाध्यक्ष श्री उदयशंकर शास्त्री पुरातत्व विभाग द्वारा संचालित उत्खनन-शिक्षण-केंद्र में शिक्षाग्रहण करने के लिये तक्षशिला भेजे गए। इसी वर्ष सभा ने कलाभवन के लिये निम्नलिखित नवीन विधान बनाया, जिसमें सभा के अहाते का पिछवाड़ा कलाभवन की नई इमारत के लिये अलग कर दिया।

इस विधान का बड़ा शुभ प्रभाव कलाभवन के हितेच्छुओं और सहायकों पर पड़ा तथा दूसरे ही वर्ष संवत् २००२ में कलाभवन को उनसे लगभग ६००० रु० की आर्थिक सहायता प्राप्त हुई। यद्यपि यह सहायता इतनी नहीं थी कि इसके द्वारा इमारत का कार्य आरंभ कराया जाता, फिर भी संग्रह और संरक्षण के लिये यह विशेष लाभप्रद हुई। इस वर्ष बंबई में होनेवाली विक्रम प्रदर्शनी में कलाभवन की उत्कृष्ट वस्तुएँ प्रदर्शनार्थ भेजी

गई जहा उनकी अच्छी प्रशंसा हुई और स्थानीय पत्रो मे विद्वानो ने उन पर लेख भी लिखे। काशी की थियासाफिकल सोसायटी की ओर से भी दो प्रदर्शनिया हुईं, जिनमें एक मुगल शैली तथा दूसरी राजस्थानी शैली के चित्रो की थी। दोनो का आयोजन कलाभवन की ओर से किया गया था। 'प्रसाद' जी तथा राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण जी गुप्त की सामग्री के प्रदर्शन भी इस वर्ष किए गए। श्रद्धेय डाक्टर भगवान्दास जी की काँसे की एक मूर्ति बनाने का संकल्प कई वर्ष पूर्व कलाभवन ने किया था, जो सामग्री के अभाव मे टलता आ रहा था। अतएव इस वर्ष निश्चय किया गया कि यह मूर्ति काँसे की न बनवा कर संगमरमर की बनवाई जाय। संवत् २००४ मे यह मूर्ति बनकर तैयार हो गई।

संवत् २००७ तक कलाभवन का संग्रह बहुत बढ गया। यहा तक कि उसके विकास और प्रसार को देखते हुए सभाभवन का समूचा ऊपरी खंड तथा नीचे का भी यथेष्ट अंश संगृहीत सामग्री के समुचित प्रदर्शन के लिये पर्याप्त नहीं पड रहा था। चेष्टा करने पर भी सभाभवन के पीछे की भूमि पर इमारत बनाने का कार्य आरंभ नहीं हो [illegible] रहा था। कला-भवन के संस्थापक संग्रहाध्यक्ष श्री रायकृष्णदास की विराट कल्पना सभा ने वहीं तक साकार होकर संवत् २००७ मे हिंदू विश्वविद्यालय मे स्थानातरित हो गयी।

१९—सभा की अर्द्धशताब्दी

संस्थाओं के जीवन मे ५० वर्ष की अवधि बहुत [illegible]। विदेशों में [illegible] सौ, दो दो सौ वर्षो की संस्थाएँ वर्तमान हैं, जो निरंतर [illegible] रही हैं। किंतु इस देश में वैसी स्थिति नहीं है। यहाँ [illegible] शील बनाए रखने के पहले इसकी चिंता करनी पड़ती है कि [illegible] जीवित रखी जायँ। ऐसी स्थिति में पचास वर्षों [illegible] जयंती मनाना इस देश मे किसी भी संस्था के लिये [illegible] यह गौरवपूर्ण अवसर संवत् २००० मे इस [illegible] बात की थी कि उस समय इसके वे तीनों [illegible] बीजारोपण किया था। अर्द्धशताब्दी मनाने [illegible] उसके लिये बराबर तैयारी हो रही थी। [illegible] उत्सव मात्र न होकर एक ऐसा रचना[illegible] और स्फूर्ति मिलेगी, जिससे आने[illegible] कर सके। ईश्वर की कृपा से [illegible] में वसंत पंचमी के अवसर पर [illegible]

संवत् २००० में ही [illegible] अपने उपाधिपत्र, प्रमान[illegible] दिए। उनके चित्रों [illegible] आषाढ़ को हुआ। [illegible]

दूसरा आयोजन भारत-कलाभवन की राजघाट शिल्प-वीथी का उद्‌घाटन था, जो २६ श्रावण को पुरातत्त्व विभाग के अध्यक्ष श्रीयुत् काशीनाथ नारायण दीक्षित द्वारा संपन्न हुआ। आर्य-भाषा पुस्तकालय के लिये प्राप्त नवीन विशेष संग्रहों का उद्‌घाटन अर्धशताब्दी संबंधी तीसरा आयोजन था, जो ३१ आश्विन को काशी हिंदू विश्वविद्यालय के प्राध्यापक श्री जीवनशंकर याज्ञिक के हाथों संपन्न हुआ।

अर्द्धशताब्दी उत्सव का मुख्य कार्यक्रम १२ माघ से आरंभ हुआ। उस दिन सायंकाल ५ बजे काशीस्थ टाउनहाल में सुप्रसिद्ध दार्शनिक और देशभक्त श्रद्धेय डा० भगवान्‌दास की ७५ वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में काशी के नागरिकों की ओर से उनका अभिनंदन किया गया था। इसी अवसर पर सभापति श्री संपूर्णानंद जी ने सभा की ओर से उन्हें मानपत्र अर्पित किया।

कई वर्ष पूर्व सभा के वर्तमान अर्थमंत्री श्री मुरारीलाल केडिया के प्रस्ताव पर सभा ने यह निश्चय किया था कि स्थानीय क्वींस कालेज के प्रिंसिपल स्व० श्री रेल्फ टामस हाचकिन ग्रिफिथ महोदय ने कालेज के हाते में जिस अशोक वृक्ष के नीचे बैठकर महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण का अँग्रेजी में पद्यबद्ध सुंदर अनुवाद करके उसके गौरव को विदेशियों पर प्रकट किया था, वहाँ एक शिला लगाई जाय। केडिया जी ने इस आयोजन का संपूर्ण व्यय भी देना स्वीकार किया था। सभा ने उनका प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार करके शिला लगाने की अनुमति भी प्रांतीय सरकार से प्राप्त कर ली थी, किंतु कई कारणों से यह कार्य टलता आ रहा था। प्राच्य साहित्य की महत्ता को पाश्चात्य विद्वानों के संमुख उपस्थित करनेवाले विद्वानों में ग्रिफिथ महोदय का विशिष्ट स्थान है। वाल्मीकि रामायण के अतिरिक्त उन्होंने वेदों का भी अँगरेजी भाषांतर किया था। पत्थर की जिस मेज पर ग्रिफिथ महोदय ये सब कार्य करते थे, वह भी सौभाग्यवश सुरक्षित रूप में मिल गई थी। केडिया जी के दान से आयोजित यह शिला-संस्कार गुरुवार १४ माघ को डा० मंगलदेव शास्त्री की अध्यक्षता में श्रद्धेय डा० भगवान्‌दास जी के हाथों संपन्न हुआ।

शुक्रवार १५ माघ को स्व० आचार्य रामचंद्र शुक्ल के स्थानीय दुर्गाकुंड वाले निवास-स्थान पर शिलालेख लगाया गया। यह पुण्य कार्य काशी विश्वविद्यालय के हिंदी-विभाग के अध्यक्ष श्री केशवप्रसाद मिश्र के हाथों संपन्न हुआ।

इसी दिन अपराह्न में सभा-भवन के पीछे की ओर बनवाए गए विशाल सुसज्जित पंडाल में अर्द्धशताब्दी उत्सव का मुख्य कार्य स्वामी भवानीदयाल संन्यासी के सभापतित्व में आरंभ हुआ। वेदपाठ और मंगलगान के अनंतर सभा के सभापति श्री संपूर्णानंद ने समागत सज्जनों का स्वागत करते हुए हिंदी की वर्तमान अवस्था का संक्षेप में वर्णन किया। तत्पश्चात् बधाई और शुभकामना के संदेश पढ़े गए। इसके अनंतर राय बहादुर डा० श्यामसुंदरदास ने सभा के ५० वर्षों के मुख्य मुख्य कार्यों की चर्चा की। सभा का यह परम सौभाग्य था कि उसके संस्थापकत्रय उस समय उसके बीच वर्तमान थे और उसी उत्साह और लगन से उसके कार्यों पर दृष्टि रखते थे। इस त्रिमूर्ति के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने का विचार बहुत पहले से स्थिर हो चुका था। तदनुसार कार्य विवरण

सुनाए जाने के अनंतर श्रीसंपूर्णानंद जी ने तीनों संस्थापकों को मानपत्र अर्पित किया। अंत में उत्सव के सभापति श्री भवानीदयाल संन्यासी ने अपना मुद्रित भाषण पढ़ा, जिसमें भारत तथा बृहत्तर भारत में हिंदी भाषा की तत्कालीन अवस्था का सिंहावलोकन कराते हुए उसकी विभिन्न समस्याओं का बहुत सुंदर ढंग से विवेचन किया गया था। रात्रि में सभा के पंडाल में पहले अवधवासी साधु सेवानंद जी (भूतपूर्व रायबहादुर श्री कौशलकिशोर) का मैजिक लालटेन की सहायता से 'अयोध्या' के संबंध में व्याख्यान हुआ। तदनंतर स्थानीय रूपलेखा भवन में काशी के कतिपय अभिनेताओं द्वारा श्री जयशंकर 'प्रसाद' लिखित 'चंद्रगुप्त' नाटक का अभिनय यथेष्ट सफलता के साथ हुआ, यद्यपि स्थानाभाव के कारण दर्शकों को असुविधा हुई। दूसरे दिन रात्रि में भी उक्त अभिनय हुआ था और उसके अनंतर नागरी-नाटक-मंडली द्वारा ओ द्विजेंद्रलाल राय लिखित 'सर पारे' नाटक के 'आशा' नामक हिंदी अनुवाद के कुछ दृश्य अभिनीत हुए।

१६ माघ को प्रातःकाल का आयोजन स्थानीय हरिश्चंद्र कालेज में अबोहर के श्रीस्वामी केशवानंद के सभापतित्व में हुआ, जिसमें हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि की आवश्यकताओं के संबंध में प्रधान मंत्री श्री रामचंद्र वर्मा लिखित निबंध का पाठ तथा देश के कोने कोने में व्यापक रूप से हिंदी का प्रचार करने के संबंध में सर्वश्री गुरुप्रसाद टंडन, चंद्रबली पांडेय आदि के भाषण हुए। उपस्थित सज्जनों ने सिनेमा और रेडियो की भाषा-संबंधी नीति की निंदा करते हुए एक प्रस्ताव द्वारा उनके अधिकारियों का ध्यान इस बात पर दिलाया कि वे सिनेमा तथा रेडियो विभाग की भाषा को ऐसा रूप दें, जिससे भारत में बसनेवाली अधिकांश जनता उसे आसानी से समझ सके।

इसी दिन अपराह्न ४ बजे स्थानीय टाउनहाल में श्री माधवप्रसाद खन्ना की अध्यक्षता में कचहरी-प्रचार-सभा हुई, जिसमें कचहरियों में हिंदी के प्रचार की आवश्यकता पर विभिन्न वक्ताओं के भाषण हुए। महामना पं० मदनमोहन मालवीय जी ने इस दिन पधारने की कृपा की थी और लगभग आधे घंटे तक भाषण दिया था। अपने भाषण में उन्होंने ५० वर्ष पूर्व कचहरियों में हिंदी प्रचार के लिये किए गए प्रयत्न तथा उसमें क्रमशः मिलनेवाली सफलता की चर्चा की और उसे सुसंगठित रूप में पुनः आरंभ करने की आवश्यकता बताई। पहले सभा ने १२ माघ से १७ माघ तक कचहरियों में हिंदी प्रचार के संबंध में सप्ताह मनाने का विचार किया था। इसके अनुसार सभा से [illegible] तथा देश की अन्य हिंदी-प्रचारिणी-संस्थाओं को सप्ताह के कार्यक्रम की भी [illegible] थी। निम्नलिखित संस्थाओं ने अपने यहाँ इसे कार्यान्वित किया था—(१) [illegible] (२) लोकमान्य समिति, छपरा, (३) भारती भूषण [illegible], गया, (४) [illegible] प्रचार मंडल, बदायूँ, (५) हिंदी-प्रचार-समिति, [illegible] (६) [illegible] (७) भारतेंदु-साहित्य संघ, मोतिहारी तथा (८) [illegible]।

अर्द्धशताब्दी के अंतर्गत सभा ने [illegible]
चित्रकला की प्रदर्शनी करना भी [illegible]
महत्त्वपूर्ण हस्तलिखित ग्रंथों और [illegible]

हाल में पत्र-पत्रिकाओं की प्रदर्शिनी आयोजित की गई थी। कचहरी-प्रचार-सभा के अनंतर कला-भवन के संग्रहाध्यक्ष श्री रायकृष्णदास ने संग्रहीत सामग्री की विशेषताएँ बताईं और उनके अनुरोध पर प्रयाग विश्वविद्यालय के वाइस चांसलर श्री डॉ० अमरनाथ झा ने उक्त प्रदर्शनियों का उद्घाटन किया।

इसके उपरांत कवि-दरबार हुआ, जिसमें हिंदी-सेवियों ने सूरदास, तुलसीदास, मीरा, केशवदास, रसखान, घनानंद, देव, पद्माकर, रत्नाकर तथा प्रसाद की भूमिका में उनकी चुनी हुई कविताएँ सुनाईं। यह आयोजन अपने ढंग का अनूठा और बहुत सफल रहा। सभा ने हिंदी के निम्नलिखित वर्तमान प्रतिनिधि कवियों का समादर करना भी निश्चित किया था—

सर्वश्री अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', मैथिलीशरण गुप्त, लक्ष्मीनारायण सिंह 'ईश', श्रीनारायण चतुर्वेदी 'श्रीवर', गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही', जगदंबाप्रसाद मिश्र 'हितैषी', सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', उदयशंकर भट्ट, हरदयालु सिंह, सुमित्रानंदन पंत, रामधारी सिंह 'दिनकर', हरिवंश राय 'बच्चन', श्यामनारायण पांडेय, सुभद्राकुमारी चौहान तथा महादेवी वर्मा। किंतु चिह्नित कवि इस समादर में संमिलित न हो सके। जिन कवियों ने पधारने की कृपा की, उनमें से प्रायः सबने अपनी अपनी उत्कृष्ट रचनाओं का रसास्वादन उपस्थित जनता को कराया।

२०—विक्रमादित्य की द्विसहस्राब्दी

तीसरे दिन सभा का तथा अखिल भारतीय विक्रम-परिषद् का संमिलित विक्रम-अभिनंदन-उत्सव सभा के पंडाल में विद्वद्वर श्री डॉ० अमरनाथ झा के सभापतित्व में हुआ। यहाँ उल्लेख कर देना आवश्यक प्रतीत होता है कि अतीत-कालीन इतिहास और राष्ट्र के विविध क्षेत्रों में, जिस विक्रम ने तीव्र प्रेरणा भरी है, उसकी द्विसहस्राब्दी के अवसर पर समुचित रूप में अभिनंदन करने का सर्वप्रथम प्रस्ताव सभा ने ही देश के समक्ष उपस्थित किया था। लोक ने श्रद्धा के साथ इसे अपनाया। देश के सभी प्रांतों में साधन की सुविधा के अनुसार अभिनंदनोत्सव हुए। सभा में उस दिन विश्वविद्यालय के प्राध्यापक श्रीकृष्ण व्यंकटेश पुणतांबेकर का विक्रम का संदेश विषयक तथ्यपूर्ण व्याख्यान हुआ था। सभापति के भाषण के अनंतर हिंदी के वयोवृद्ध साहित्यिकों का अभिनंदन किया गया। सभा ने इस अवसर पर निम्नलिखित महानुभावों का अभिनंदन करना निश्चित किया था—

सर्वश्री जगन्नाथप्रसाद भानु, डा० नलिनीमोहन सान्याल, महामहोपाध्याय रायबहादुर डा० गौरीशंकर हीराचंद ओझा, पुरोहित हरिनारायण शर्मा, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', गोपालराम गहमरी*, कन्हैयालाल पोद्दार, रावराजा डा० श्यामबिहारी मिश्र, राय बहादुर शुकदेवबिहारी मिश्र*, व्रजनंदन सहाय*, कामताप्रसाद गुरु, अंबिकाप्रसाद वाजपेयी*, हरिकृष्ण जौहर तथा बाबूराव विष्णु पराड़कर*।

इनमें से केवल* चिन्हित सज्जन ही यहाँ पधार सके। शेष सज्जनों के मानपत्र आदि उत्सव के अनंतर डाक द्वारा उनके पास भेज दिए गए। अभिनंदन के पश्चात् पुरस्कार और पदक वितरित किए गए।

इसके पश्चात् हरदोई के सिविल जज श्री गोपालचंद्र सिंह का व्याख्यान हुआ, जिसमें उन्होंने फारसी लिपि में लिखे ऐसे प्राचीन ग्रंथों का परिचय दिया, जो भाषा और विषय की दृष्टि से हिंदी के हैं। अंत में सभा के प्रधान मंत्री ने सभा की भावी योजनाओं पर प्रकाश डालते हुए उसकी आवश्यकताओं का उल्लेख किया; और उनकी पूर्ति के लिए ६ लाख रुपयों की अपील की।

रात्रि में स्थानीय ट्रेनिंग कालेज की रंगशाला में अखिल भारतीय विक्रम-परिषद् की ओर से अतिथियों को 'कालिदास' नाटक दिखाया गया।

अर्द्धशताब्दी के अवसर पर सभा ने निम्नलिखित ग्रंथ प्रकाशित करना निश्चित किया था—

१—अर्द्धशताब्दी इतिहास (तीन खंडों में)
२—खोज में ज्ञात प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों की सूची।
३—सभा के आर्यभाषा पुस्तकालय में संगृहीत ग्रंथों की सूची।
४—भारत-कला-भवन में संगृहीत वस्तुओं की सूची।
५—नागरीप्रचारिणी पत्रिका का विक्रमांक।

इनमें से अर्द्धशताब्दी इतिहास का प्रथम खंड, जिसमें सभा की स्थापना से लेकर उसका ५० वर्षों तक का क्रमबद्ध विस्तृत परिचय है, तथा नागरीप्रचारिणी पत्रिका के विक्रमांक का पूर्वार्द्ध ही अर्द्धशताब्दी के अवसर पर प्रकाशित हो सके।

अर्द्धशताब्दी इतिहास के दूसरे खंड में देश-विदेश में हिंदी-प्रचार का विस्तृत विवरण, प्रांतीय भाषाओं की प्रगति का विवरण तथा हिंदी-प्रचारिणी संस्थाओं की तालिका और तीसरे खंड में भारतेंदु-काल से लेकर आधुनिक काल तक की हिंदी की प्रगति का इतिहास देने का निश्चय हुआ था, किंतु अनिवार्य कारणों से वह कार्यान्वित नहीं हो सका।

उत्सव में संमिलित होने के लिये संयुक्त प्रांतीय सरकार ने काशीस्थ क्वींस कालेज के प्रिंसिपल राय साहब श्री परमानंद एम० ए० को, हिंदू विश्वविद्यालय ने अपने हिंदी विभाग के अध्यक्ष श्री केशवप्रसाद मिश्र को, पटना विश्वविद्यालय ने अपने वाइसचांसलर डा० सच्चिदानंद सिंह को तथा लखनऊ विश्वविद्यालय ने अपने हिंदी विभाग के प्राध्यापक डा० केसरीनारायण शुक्ल को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया था। संयुक्त प्रांतीय सरकार ने प्रतिनिधि भेजने के अतिरिक्त ५००) की सहायता भी प्रदान की थी। उपर्युक्त प्रतिनिधियों में से केवल डा० सच्चिदानंद सिंह अस्वास्थ्य के कारण उत्सव में संमिलित नहीं हो सके, शेष सभी प्रतिनिधि उत्सव में संमिलित हुए थे।

उत्सव की सफलता और सभा के प्रति शुभकामना के संदेश देश के कोने कोने से आए थे। संदेश भेजनेवाले सज्जनों में से कुछ ये हैं—सर्वश्री महामहोपाध्याय राय बहादुर गौरीशंकर हीराचंद ओझा, निकोलस डि रोरिक, सरोजिनी नायडू, मैथिलीशरण गुप्त, ए० जी० शिरेफ, दीवान बहादुर हरविलास शारदा आदि।

आर्थिक स्थिति

सभा ने जैसे बड़े बड़े कार्य किए हैं और सभा का जितना नाम है, आर्थिक दृष्टि से उसकी वैसी स्थिति नहीं है। विगत साठ वर्षों में उसके द्वारा हुई हिंदी की ठोस सेवाओं, हिंदी-भाषी जनता और हिंदी-प्रेमियों की संख्या को देखते हुए यह आशा करना स्वाभाविक है कि सभा के स्थायी कोष में २०—२५ लाख अवश्य जमा होगा। किंतु यहाँ डेढ़ लाख भी नहीं है। आश्चर्य तो इस बात का है कि आर्थिक कठिनाइयों के होते हुए भी सभा ने इतना कार्य किस प्रकार कर दिखाया। विगत प्रकरणों को पढ़ने से ज्ञात होता है कि किस प्रकार इधर-उधर से जुटाकर सभा अपना काम चलाती रही है। सभा के प्रारंभिक वर्षों में तो स्थिति यह थी कि यदि किसी से एक रुपया चंदा मिल जाता, तो बड़ा आनंद मनाया जाता था और सभा की ओर से दाता को अनेक धन्यवाद दिए जाते थे। आर्थिक कठिनाइयों की परवा न कर सभा का-जीवन इस प्रकार खेते आने का श्रेय उसके उन कर्णधारों को है, जिन्होंने इस नौका में बैठकर निःस्वार्थ भाव से सरस्वती की आराधना की, जिनके हृदयों में हिंदी-सेवा की लगन थी और जिन्होंने कभी अपने आर्थिक लाभ का लोभ सभा से नहीं किया। इन कर्णधारों के लिये यह गौरव की बात अवश्य है। किंतु हिंदी-प्रेमी जनता के लिये नहीं। जनता का गौरव इसी में था कि ऐसी उपयोगी संस्था को आर्थिक कष्ट का सामना कुछ भी न करना पड़ता और आज उसके स्थायी कोष में २०-२५ लाख जमा होते। बात यह है कि सभा ने अपनी बड़ाई के ढोल नहीं पीटे। सभा के संचालकों को कार्य की धुन थी, पैसे की नहीं। कार्य की पूर्त्ति के लिये जितने धन की आवश्यकता पड़ती थी, ज्यों त्यों करके उतना जुटाने का प्रयत्न किया जाता था। स्थायी कोष स्थापित करने की बात भी उस समय उठी जब सभा को अपना भवन बनवाने की आवश्यकता पड़ी। सभा की उपयोगिता को देखते हुए उसे चिरस्थायी बनाना आवश्यक था, जिसके लिये अपना भवन और स्थायी कोष अनिवार्य थे। संवत् १९५५ में भवन-निर्माण का निश्चय हुआ और उसके लिये उद्योग आरंभ किया गया। दो वर्ष में जो धन एकत्र हो सका, उसी को सं० १९५७ में स्थायी कोष का रूप दिया गया। इस प्रकार स्थायी कोष की स्थापना का दृढ़ निश्चय हो जाने पर सभा के आठवें वार्षिक अधिवेशनमें ३२ आषाढ़, सं० १९५८ (१६ जुलाई, १६०१) को स्थायी कोष के लिये निम्नलिखित नियम स्वीकृत हुए—

"(१) निम्नलिखित महाशय स्थायी कोषके ट्रस्टी और बाबू गोविंददास उसके मंत्री नियत किए जायँ और इन महाशयों से प्रार्थना की जाय कि वे अपने लिये नियम बनाकर सभा में स्वीकारार्थ उपस्थित करें।

१—श्रीमान् आनरेबुल महाराज सर प्रतापनारायण सिंह बहादुर के० सी० आई० ई०, अयोध्या।

२—राजा कमलानंद सिंह बहादुर श्रीनगर, पूर्णिया।

३—आनरेबुल राजा पंडित सूर्य कौल सी० आई० ई०, लाहौर।

४—आनरेबुल मुंशी माधोलाल, काशी।

५—म० म० पं० सुधाकर द्विवेदी, काशी।

६—ला० हसराज बी० ए०, लाहौर ।

७—पं० मदनमोहन मालवीय, बी० ए०, एल-एल० बी०, प्रयाग ।

८—बाबू गोविंददास, काशी ।

९—राय शिवप्रसाद, काशी ।

१०—बाबू इंद्रनारायण सिंह, काशी ।

११—मंत्री नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी ।

(२) इस कोप का हिसाब बनारस के बैंक बंगाल में खोला जाय और हिंदी के प्रेमियो को सूचना दी जाय कि वे अपने दान का रुपया सीधे बैंक मे भेज सकते है।

(३) जो कुछ धन एकत्रित हो उसमें से एक गृह सभा के लिये बनवाया जाय और बाकी रुपया जमा कर दिया जाय तथा केवल उसके सूद से ही सभा का कार्य चले और उसके उद्देश्यो की पूर्ति हो।

(४) इस स्थायी कोष के मूलधन में से रुपया व्यय न किया जाय जब तक सभा के सभासदो का ३/४ भाग वैसा करने की आज्ञा और संमति न दे।

(५) जो लोग एक रुपए वा उससे अधिक की सहायता इस कोप की पूर्ति के लिये दें, उनके नाम दान की संख्या सहित सभा की पत्रिका में प्रकाशित किए जायँ।

(६) हिंदी के प्रेमियो को अधिकार होगा कि जितना चाहे इस कोष की सहायता के लिये दें।

(७) जब एक लाख रुपया एकत्रित हो जाय, तो इस विषय का एक वृहत् विवरण प्रकाशित किया जाय, जिसमें सब दाताओं के नाम दान की संख्या सहित प्रकाशित किए जायँ। यह रिपोर्ट सबके पास बिना मूल्य भेजी जाय।

(८) दाताओं के अधिकार इस प्रकार हो—

१—जो लोग २००) से लेकर १०००) रु० तक वे इस कोष की सहायता करें, उनके अधिकार स्थायी सभासदो के हों और उनके नाम एक [illegible] पर खोदकर [illegible] भवन में लगा दिए जायँ।

२—जो लोग १०००) से ५०००) तक वे [illegible] की सहायता करें, उन्हें [illegible] सभासदो के अधिकार हो, पर उनका नाम संगमर्मर के [illegible] पर खोदकर [illegible] दिया जाय।

३—जो लोग ५०००) अथवा इससे अधिक [illegible] जाय और उनके नाम स्वर्णाक्षरो में खोदकर [illegible] उन्हें [illegible] के अधिकार हों।

४—जो इससे भी विशेष [illegible] की सहायता करें, उनका [illegible] किया जाय। इन लोगो तथा १०००) [illegible] के वार्षिक विवरण में छापे जायँ।

(९) जो लोग ५००) [illegible] करके वे उसे एक वर्ष में [illegible] कार हो कि [illegible]

(६) प्रबंधकारिणी सभा की अनुमति से सहायकों को अधिकार हो कि वे दो वा अधिक नामों से दान दें, पर स्थायी सभासद् के अधिकार उनमें से केवल एक को ही हों।

(७) ट्रस्टी कम से कम ९ और अधिक से अधिक २५ हों। प्रबंधकारिणी सभा जब कभी उचित समझे कुछ लोगों के ट्रस्टी नियत किए जाने का प्रस्ताव साधारण सभा में करे। उनमें से जो लोग चुने जायँ, उनमें से ट्रस्टियों को अधिकार हो जिसको चाहे चुनें। इस प्रकार जो लोग चुने जायँ उन्हें ट्रस्टियों के पूर्ण अधिकार हों।

(८) ट्रस्टी अपनी ओर से हिसाब जाँचनेवाला नियत कर दें।

(९) प्रबंधकारिणी सभा मासिक आय-व्यय के हिसाब पर यथा समय स्वयं विचार कर लिया करे।

(१०) ट्रस्टियों को प्रथम श्रेणी के सभासदों के अधिकार हों।

(११) यदि किसी विशेष कारण से किसी महाशय का ट्रस्टियों में से अलग किया जाना आवश्यक समझा जाय, तो बोर्ड आफ़ ट्रस्टीज और साधारण सभा के परस्पर प्रस्ताव और विचार पर उसका निर्णय सभा के वार्षिक अधिवेशन में अधिक संमति से किया जाय।

बोर्ड आफ़ ट्रस्टीज के नियम

अगले वर्ष अर्थात् सभा के नवें वर्ष में 'बोर्ड आफ ट्रस्टीज' के लिये सभा ने निम्न-लिखित नियम स्वीकार किए। ट्रस्टियों में लाहौर के राजा सूर्य कौल का नाम नहीं रहा और काशी के सर्वश्री साँवलदास, रामप्रसाद और राधाकृष्णदास के नाम संमिलित किए गए।

(१) काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के स्थायी कोष का पूरा अधिकार बोर्ड आफ़ ट्रस्टीज को होगा। उसका यह कर्तव्य होगा कि इस कोष से जो आमदनी हो, उसे नागरी-प्रचारिणी सभा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये ही केवल उस सभा की प्रबंधकारिणी सभा द्वारा व्यय करे।

(२) स्थायी कोष के मूलधन में से रुपया व्यय न किया जायगा जब तक काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के सभासदों का ¾ भाग वैसा करने की स्पष्ट आज्ञा और संमति न दे।

(३) बोर्ड आफ ट्रस्टीज के सभासद कम से कम ९ और अधिक से अधिक २५ होंगे। ये यावज्जीवन सभासद रहेंगे अथवा जब तक कि ये स्वयं उसे छोड़ न दें। नागरी-प्रचारिणी सभा का मंत्री बोर्ड का एक सभ्य होगा।

(४) जब बोर्ड के या सभा के विचार में नए ट्रस्टियों का चुना जाना आवश्यक हो, तो पारी पारी से बोर्ड और सभा की ओर से ट्रस्टी चुन लिए जायँगे, जिनकी संख्या अधिक से अधिक एक बार में तीन होगी।

(५) यदि बोर्ड का कोई अधिकारी या सभासद कोई ऐसा कार्य करेगा जिससे सभा की हानि हो या उसका किसी प्रकार से उपहास हो तो वह विचारपूर्वक अपने पद से च्युत किया जायगा। इसका प्रस्ताव बोर्ड सभा के वार्षिक अधिवेशन में करेगा और निर्णय अधिक संमति द्वारा होगा।

(६) बोर्ड अपना सभापति, दो उपसभापति, और एक सहायक मंत्री चुनेगा जो ५ वर्ष तक अपने पद का कार्य करेंगे, यदि इस बीच में बोर्ड उन्हें निज पद से अलग करना

उचित न समझे। पाँच वर्ष के अनतर ये फिर भी उस पद का ग्रहण कर सकेंगे। मन्त्री सभा के वार्षिक अधिवेशन में चुने जायेंगे। ५ वर्ष मन्त्रित्व का काम करेंगे (यदि इस बीच में सभा उन्हें अपने पद से अलग करना न चाहे) और पुन. इस पद को ५ वर्ष के पीछे ग्रहण कर सकेंगे।

(७) सभापति और उनकी अनुपस्थिति में उपसभापति सभापति का सब कार्य करेंगे और किसी विषय पर समति का समभाग होने से उनकी समति दो के बराबर होगी।

(८) सभापति और उपसभापति दोनो की अनुपस्थिति में उपस्थित सभासदो में से कोई महाशय सभापति चुन लिए जायें और उनकी समति भी सम विभाग होने पर दो के बराबर समझी जायगी।

(९) बोर्ड के साधारण अधिवेशन वर्ष में दो बार अर्थात् आश्विन नवरात्र और अप्रैल में होंगे। परतु विशेष अधिवेशन सभापति अथवा मन्त्री कभी भी कर सकते हैं। किंतु तीन सभासदो के लिखने पर ऐसा अधिवेशन अवश्य किया जायगा।

(१०) बोर्ड के साधारण अधिवेशनो की सूचना नियत तिथि के कम से कम १५ दिन पहिले दी जायगी और जहाँ तक सभव होगा उस अधिवेशन में क्या क्या कार्य होंगे इसकी सूचना भी दे दी जायगी। साधारण अधिवशन में ३ और विशेष अधिवेशन में ५ सभासदों के उपस्थित होने पर कार्य हो सकेगा, परतु यदि कोई अधिवेशन कोरम पूरा न होने के कारण न हुआ, तो वह दूसरे दिन के लिये टाल दिया जायगा और उसम बिना इस बात का विचार किए हुए कि कोरम हुआ है या नहीं कार्य का निर्वाह किया जायगा। ऐसे अधिवेशन की सूचना केवल स्थानीय सभासदो को ही दी जायगी।

(११) ट्रस्टीज को सभा के सबध म वे ही अधिकार रहेंगे जो नागरीप्रचारिणी सभा के प्रथम श्रेणी के सभासदो को उसके नियमानुसार प्राप्त हैं।

(१२) बोर्ड की साधारण सभाओं म अन्य आवश्यक कार्यों के अतिरिक्त निम्नलिखित कार्यों का निर्वाह होगा—

१—आडीटरों का चुना जाना—इनका अवधिकाल १ जुलाई से ३० जून पर्यंत होगा। (अप्रैल)

२—नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबधकारिणी सभा के स्थायी कोष सबधी बजट पर विचार। (अप्रैल)

३—स्थायी कोष की आय से जो जो कार्य हुए हों उनकी रिपोर्ट पर, जो प्रबध कारिणी सभा प्रतिवर्ष देगी, विचार। (आश्विन)

४—सभासदो और कार्यकर्ताओं का चुनाव जब आवश्यक हो। (अप्रैल और आश्विन)

(१३) बोर्ड के अधिवेशनो का कार्यविवरण सभा की पत्रिका म छाप दिया जाया करेगा।

(१४) मन्त्री और उसकी अनुपस्थिति में सहायक मन्त्री का यह कार्य होगा कि रुपया लें, उसकी रसीद दें, उससे गवर्नमेंट प्रामेसरी नोट मोल लें, रुपया या दोनो को बैंक बगाल या सेविंग बक म (जैसा कि समय समय पर

--आर्थिक दृष्टि से सभा के निम्नलिखित विभाग किए जा सकते हैं--

खर्च खाते	वार्षिक आय के स्रोत
१—(क) देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला	इंपीरियल बैंक के हिस्सों का व्याज तथा पुस्तकों की बिक्री
(ख) बालावख्श राजपूत चारण पुस्तकमाला	प्रामिसरी नोट का व्याज तथा पुस्तकों की बिक्री
२—(क) पदक तथा पुरस्कार	प्रामिसरी नोट का व्याज
(ख) साहित्य परिषद्	,, ,, ,,
३—(क) सूर्यकुमारी पुस्तकमाला	पुस्तकों की बिक्री
(ख) देव पुरस्कार ग्रंथावली	,, ,,
(ग) महेंदुलाल गर्ग वि. ग्रं.	,, ,,
(घ) रुक्मिणी देवी ग्रंथमाला	,, ,,
(ङ) रामविलास पोद्दार स्मा०	,, ,,
(च) नव भारत ग्रंथमाला	,, ,,
(ज) हिंदी संकेतलिपि विद्यालय	विद्यार्थियों का शुल्क
४—(क) याज्ञिक ग्रंथमाला	पर्याप्त द्रव्य न होने के कारण अभी प्रकाशन का कार्य रुका है
(ख) सिद्धवाणी संग्रह	,, ,, ,,
(ग) आधारित कोप	,, ,, ,,
(घ) हस्तलिखित हिंदी पु० की खोज राजस्थान	पर्याप्त द्रव्य न होने के कारण कार्य नहीं हो रहा है
५—(क) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों की खोज उ. प्रदेश	सरकारी सहायता
(ख) आर्य भाषा पुस्तकालय	सरकारी सहायता; म्युनिसिपल बोर्ड की सहायता, चंदा
(ग) नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला	सरकारी सहायता
६—(क) नागरीप्रचारिणी पत्रिका	सभासदों का चंदा, ग्राहक शुल्क
(ख) नागरी मुद्रण	छपाई
७—(क) पुस्तक प्रकाशन (ख) कार्यालय वेतन (ग) डाक व्यय (घ) फुटकर (ङ) हिंदी प्रचार (च) भवन संस्कार तथा निर्माण (छ) यात्रा व्यय (ज) ऋण भुगतान	पुस्तकों की बिक्री स्थायी कोप का व्याज पुस्तक मालाओं की बिक्री से कार्यालय व्यय २५%
८—(क) सत्य ज्ञान निकेतन	विशेष चंदा
(ख) उत्सव आदि	,,

उक्त विभागों में पहले विभाग की आय दाताओं की दी हुई निधियों के व्याज से होती है, इसलिए सभा को अपने पास से कुछ लगाना नहीं पड़ता। दूसरे विभास की मदों में पदक तथा पुरस्कार के अंतर्गत स्वर्गीय डाक्टर श्यामसुंदरदास की पुण्य स्मृति में डाक्टर श्यामसुंदरदास पुरस्कार की स्थायी निधि की स्थापना करने का निश्चय सं० २००४ में सभा ने किया था। इस स्थायी निधि में सभा प्रति वर्ष अपने साधारण आय से २००) जमा करती है। सभा का दिया हुआ द्रव्य तथा चंदा मिला कर अब तक लगभग ३३००) इसमें जमा हुआ है। जिसमें से १०००) इस वर्ष पुरस्कार दिया जा रहा है। इस निधि में कम से कम १००००) प्राप्त हो जाने पर सभा १०००) का पुरस्कार प्रति चौथे वर्ष दे सकेगी। प्रत्येक हिंदी भाषी तथा प्रत्येक हिंदी प्रचारिणी संस्था से सभा का आग्रह है कि वह हिंदी के उस परम संरक्षक के निमित्त किए गए सदनुष्ठान में यथासाध्य अधिक से अधिक आर्थिक योग देकर इसकी पूर्ति में सहायक हों। साहित्य परिषद् की जो स्थायी निधि है, उससे वर्ष में केवल ३६) व्याज मिलता है, जो स्व० हिंदी साहित्य सेवियों की जयंतियाँ मनाने के लिये पर्याप्त नहीं है। सभा को इस मद में अपने साधारण आय से कुछ न कुछ व्यय करना पड़ता है।

तीसेरे विभाग की मदों की स्थायी निधि नहीं है, पर उनमें जो वार्षिक आय होती है उसी में से खर्च किया जाता है।

चौथे विभाग की मदों में इतना कम द्रव्य प्राप्त हुआ है कि अभी तक कार्य रुका है। पांचवें विभाग की पदों में सरकारी सहायता आदि प्राप्त होती है, किंतु आय से अधिक व्यय होता है, जिसकी पूर्ति सभा को अपनी साधारण आय में से करनी पड़ती है। छठेविभाग में नागरीप्रचारिणी पत्रिका के प्रकाशन में सभासदों के चंदे तथा ग्राहक शुल्क से जो आय होती है, वह पर्याप्त नहीं है। इस मद में जो कमी होती है उसकी पूर्ति सभा को अपनी साधारण आय में से करनी पड़ती है। नागरी मुद्रण में छपाई का द्रव्य जो प्राप्त होता है, उससे इसका कार्य चल जाता है; किंतु इसको स्थापित करने में जो सभा ने द्रव्य लगाया है ,वह अभी नहीं निकल रहा है; क्योंकि इसके लाभकी रकम अभी इसकी अभिवृद्धि में लगायी जा रही है। सातवें विभाग में के सब खर्चों के लिये सभा को अपनी साधारण आय पर ही निर्भर रहना पड़ता है, किंतु आय कम होने के कारण प्रति वर्ष कुछ न कुछ घाटा उठाना पड़ता है। इस समय लगभग १०००००) का ऋण सभा के ऊपर है। अर्द्धशताब्दी के अवसर पर उस समय तक जो ऋण था वह चुका दिया गया था, किंतु इधर १० वर्षों में यह पुनः हो गया है। यह ऋण मुख्यतः नागरी मुद्रण की स्थापना तथा संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर के प्रकाशन में हुआ है। सभा का आवश्यक व्यव इतना अधिक है कि इनसे जो आय होती है, उससे ऋण चुकाना संभव नहीं है।

आठवें विभाग में सत्य ज्ञान निकेतन की रक्षा तथा उसकी अभिवृद्धि के निमित्त सभा को अपनी साधारण आय से प्रति वर्ष १५००) व्यय करना पड़ता है। चंदे से उसकी पूर्ति नहीं हो रही है।

सभा के विगत ६० वर्षों के आय-व्यय का विस्तृत लेखा परिशिष्ट में दिया गया है। विभिन्न निधियों की स्थायी संपत्ति प्रामिसरी नोट आदि का अंकित मूल्य १६११५०) है।

बचत का जो २५३५५।≡) ४ है, वह साधारण आय का द्रव्य नहीं है, वरन् विभिन्न निधियों का नगद द्रव्य है।

सभा की आवश्यकताएँ

जैसा कि पहले बताया गया है, यदि सभा को आर्थिक सुविधा मिल जाय, तो वह अपने उन अनेक उपयोगी कार्यों को पूरा कर सकती है, जो आर्थिक अभाव के कारण या तो अभी तक आरंभ ही न हो सके, अथवा यथेष्ट प्रगति के साथ नहीं किया जा सके। जिस प्रकार सभा के कार्य बढ़ गए हैं और वह हिंदी भाषा और नागरी लिपि की अधिकाधिक सेवा करने का प्रयत्न कर रही है, उसी प्रकार उसकी आर्थिक सुविधा में भी वृद्धि होना आवश्यक है।

१—सभा वर्षों से प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों की खोज का कार्य कर रही है और बहुत सा कार्य उसने इन वर्षों में किया है, किंतु भारतवर्ष जैसे महादेश में यह कार्य अभी एक प्रतिशत के बराबर भी नहीं हुआ है। राजस्थान में तो इस प्रकार से कुछ हुआ ही नहीं। वहाँ हस्तलिखित ग्रंथों के अनेक भांडार भरे पड़े हैं। न जाने कितने ग्रंथरत्न मिट्टी में मिल गए, कितनों को कीड़े चाट गए और चाटते ही चले जा रहे हैं। क्या इस साहित्यनिधि की रक्षा करना हिंदीप्रेमियों का कर्त्तव्य नहीं है? राजस्थान में ही नहीं, मध्यदेश, मध्यभारत और पंजाब में भी अनेक भांडार विद्यमान हैं, जिनमें खोज का कार्य कुछ भी नहीं हुआ। इस कार्य को सुचारुरूप से चलाने के लिये प्रांतीय सरकारों की सहायता के अतिरिक्त कम से कम एक लाख का स्थायी कोष सभा के पास होना आवश्यक है।

२—खोज में प्राप्त हुए प्राचीन ग्रंथों का प्रकाशन भी सभा वर्षों से कर रही है, किंतु इसके लिये धन का कोई स्थायी प्रबंध न होने के कारण यह कार्य यथेष्ट परिमाण में नहीं हो पाता; कभी कभी तो आर्थिक अभाव के कारण काम रोक देना पड़ता है। हस्तलिखित ग्रंथों को प्राप्त कर सुरक्षित रखना और उन्हें संपादित करके प्रकाशित करना अत्यंत आवश्यक है। इस कार्य के लिये भी एक लाख की स्थायी निधि सभा के पास होनी चाहिए।

३—सभा ने जो अनुशीलन विभाग खोला था उसे अर्थाभाव के कारण बंद कर देना पड़ा। फिर से चालू करने के लिये भी धन की आवश्यकता है। ऐतिहासिक और [illegible] ग्रंथों का समृद्ध संग्रह उसमें रहना चाहिए। अनुशीलन करनेवाले छात्रों के अध्ययन [illegible] रहने के लिये अध्ययन-मंदिर तथा अतिथिशाला [illegible] के [illegible] आवश्यक है।

४—सभा के प्रायः सभी विभागों की उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है [illegible] चित स्थान न होने के कारण वहाँ कर्मचारियों का काम करना पड़ रहा है [illegible] संकोच है। इस कठिनाई को दूर करने के लिये कम से कम दो लाख [illegible] ंत होना चाहिए।

११

५ हिंदी शब्दसागर के छपे बहुत दिन हो गए; उसके पश्चात् हिंदी का विपुल साहित्य निर्मित हुआ और अनेक प्राचीन पुस्तकें प्रकाशित हुईं। इन सब सामग्रियों का उपयोग करके वैज्ञानिक ढंग से एक सर्वांग पूर्ण कोश का अभाव आज भी हिंदी संसार को अनुभव हो रहा है। सभा बहुत दिनों से एक ऐसा कोश प्रस्तुत करना चाहती है और उसके लिये प्रयत्न भी होते रहते हैं, परंतु अर्थाभाव के कारण उसे, अपना कोश विभाग भी बंद कर देना पड़ा। कोश का काम अत्यन्त व्ययसाध्य है। उसके लिये भी सभा को ५ लाख रुपयों की आवश्यकता है।

६—इसी प्रकार भारत के पश्चिमी प्रांतों में भी हिंदी के सुसंघटित प्रचार की बहुत बड़ी आवश्यकता है। श्री स्वामी सत्यदेवजी की कृपा से सभा ने इस ओर कदम तो उठाया है, किन्तु पर्याप्त धनराशि के विना यह कार्य आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। फिर भी भारत के बाहर उपनिवेशों में जो भारतीय बसे हैं, वे हिंदी को भूल रहे हैं। उनमें हिंदी का प्रचार करना अत्यावश्यक है। सभा इसके लिये भी उपयुक्त आयोजन करना चाहती है।

७—इन सब आवश्यकताओं के समान ही सभा का स्थायी कोष पूरा करने की भी आवश्यकता है। इस कोष में कम से कम पाँच लाख रहना अत्यावश्यक है, जिसमें केवल (११०२००) एकत्र हो सका है, शेष भी शीघ्र हो जाना चाहिए।

२०—हीरक जयंती

सभा की अर्द्धशताब्दी के बाद ही सभा ने संवत् २०१० में सभा की हीरक जयंती का आयोजन करने का निश्चय किया था। संवत् २०१० के आरंभ से ही इसकी चिंता होने लगी थी और जयंती के विभिन्न आयोजनों की तैयारी आरंभ कर दी गई थी। जिस प्रकार अर्द्धशताब्दी महोत्सव पर सभा ने रचनात्मक कार्यों का अनुष्ठान किया था, उसी प्रकार हीरक जयंती पर भी विभिन्न विभागों की संपुष्टि और चालू कार्यों की सम्यक् पूर्ति के अतिरिक्त नवीन योजनाओं के अनुसार, जो रचनात्मक कार्यक्रम स्थिर किया गया, उसका मुख्यांश निम्नलिखित है—

१. जयंती ग्रंथ का प्रकाशन : इसके अंतर्गत
  क. सभा के गत साठ वर्षों का विवरण
  ख. पिछले साठ वर्षों में भारतीय साहित्य की प्रगति का सिंहावलोकन
२. नागरीप्रचारिणी पत्रिका का विशेषांक
३. आर्यभाषा पुस्तकालय का विस्तार और संवर्द्धन
४. नागरीमुद्रण का विकास
५. अतिथिभवन का निर्माण
६. विभिन्न प्रकाशन

इन संकल्पों के अनुसार व्यवस्था करने के लिये वर्ष के आरंभ में ही एक उपसमिति का संघटन करके कार्यारंभ कर दिया गया। हीरक जयंती उपसमिति में निम्नलिखित सज्जन रहे:—

डॉ० अमरनाथ झा
पं० गुरुसेवक उपाध्याय
ठा० शिवकुमार सिंह
डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी (कार्याध्यक्ष)
श्री करुणापति त्रिपाठी
श्री बलराम उपाध्याय
डॉ० श्रीकृष्ण लाल
डॉ० राकेश गुप्त
श्री ठाकुरप्रसाद सिंह
श्री कृष्णानंद जी
श्री बचन सिंह
श्री गोविन्दप्रसाद केजरीवाल
पं० चंद्रबली पांडेय
श्री गोपालचंद सिंह
बाबा राघवदास
श्री सुधाकर पाण्डेय
श्री विश्वनाथ राय
श्री पद्मनारायण आचार्य
श्री उदयशंकर शास्त्री
श्री विशुद्धानंद पाठक
श्री मंगलनाथ सिंह
श्री मुरारीलाल केडिया
श्री नारायणदास बाजोरिया
श्री बैजनाथ सिंह 'विनोद'

डा० राजबली पांडेय (संयोजक)

अर्थ-संग्रह

अपनी उपर्युक्त योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिये सभा को सबसे बड़ी आवश्यकता धन की थी। एतदर्थ पत्रों में अपील प्रकाशित की गई, शिक्षा संस्थाओं से अनुरोध किया गया कि कम से कम ५) अपनी अपनी संस्थाओं की ओर से भेजें तथा सभा के सदस्यों और अन्य संबद्ध सज्जनों से आग्रह किया गया कि कम से कम अपनी एक दिन की आय इस कार्य के लिये प्रदान करें। यह भी निश्चय किया गया कि सभा का शिष्टमंडल प्रमुख नगरों में जाकर धन एकत्र करे। तदनुसार कलकत्ता, पटना, लखनऊ तथा दिल्ली नगरों में शिष्टमंडल ने दौरा किया। मंडल को अर्थसंग्रह के कार्य में यथेष्ट सफलता मिली। इस मंडल में डॉ० अमरनाथ झा, पं० गुरुसेवक उपाध्याय, डॉ हजारीप्रसाद द्विवेदी, श्री मुरारीलाल केडिया, श्री गोविंदप्रसाद केजरीवाल, श्री बैजनाथ सिंह 'विनोद' और डॉ राजबली पांडेय थे। शिष्टमंडल को कलकत्ते में श्री सीताराम जी सेकसरिया, श्री भागीरथ जी कनोडिया, श्री मूलचंद जी अग्रवाल (संचालक—"विश्वमित्र") पं० सूर्यनाथ पाण्डेय (संपादक "सन्मार्ग") दिल्ली में पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और पं० बनारसी दास चतुर्वेदी तथा पटना में श्री लक्ष्मीनारायण [illegible] सहायता मिली। जिन श्रीमंतों ने सभा को विशेष सहायता [illegible] हैं:—

परिशिष्ट क

THE NAGARI MEMORIAL

(From the Pioneer, Thursday, March 3, 1808)

A Deputation waited upon His Honour the Lieutenant: Governor, N. W. P., and Chief Commissioner of Oudh, at Government House, Allahabad yesterday, to present a Memorial praying for the introduction of the Nagri character in Courts and Public offices in the United Provinces. The deputation consisted of the following gentlemen:—

Maharaja Sir Pratap Narayan Sinh, Bahadur K.C.I.E., of Ajodhya.

Raja Balwant Sinh, C. I. E., of Awa, (Etah.)
Raja Ghanshyam Sinh of Mursan, (Aligarh)
Raja Rampratap Sinh of Manda, (Allahabad).

Munshi Ram Prasad, Advocate, High Court, N.W, P, and President, Kayasth Pathshala Committee, (Allahabad).

Pandit Sundarlal, B.A., Advocate, High Court, N.W.P, and Fellow of the Allahadad University, (Allahabad).

Rai Siddheshwari Prasad Narayan Sinh Bahadur, of Salemgarh. (Gorakhpur).

Rai Kuar Misr Harcharan, Bahadur (Bareilly).
Rai Nihal Chand Bahadur, (Muzaffarnagar).
Rai Kishen Sahai Bahadur, (Meerut).
Raja Lachmandas, C. I. E., (Muttra).

The Hon'ble Raja Rampal Sinh of Rampur, Member, Legislative Council, N.W.P. and Oudh, (Pratabgarh).

The Hon'ble Seth Raghubar Dayal, Member, Legislative Council, N. W. P. and Oudh, (Sitapur).

The Hon'ble Rai Sriram Bahadur, M. A., B. L., Advocate, Judicial Commissioner's Court, Lucknow, Fellow of the Allahabad University, and Member, Legislative Council N. W. P. and Oudh, (Lucknow).

Munshi Madho Lal, retired Subordinate Judge, (Benares).

Rai Pramada Das Mitter Bahadur, Fellow of the Allahabad University, (Benares).

Pandit Madan Mohan Malaviya, B. A., LL. B., Vakil, High Court, N. W. P., (Allahadad).

The memorial ran as follows:—

May it Please Your Honour,

We, the undersigned residents of the North-Western Provinces and Oudh, beg most respectfully to approach Your Honour with this humble memorial regarding a matter which deeply affects the administration of justice and the progress of primary education in these provinces, namely, the use of the Persian character for writing the vernacular pleadings and proceedings of Courts and public offices.

2. It is more than sixty years since the Goverment of India, holding that it was reasonable and just that the proceedings of judicial and revenue courts should be conducted in a language familiar to the litigant parties and to the people at large, ordered the vernaculars of the different provinces to be substituted for Persian, in which language those proceedings were conducted since the days of Mahomedan rule Accordingly in 1839 Bengali was substituted in Bengal and Uriya in Orissa. In the vast tract of country known as Hindustan, where the prevailing vernacular was, as it now is, Hindi, written in the Nagri character or some of its variations, Urdu written in the Persian character was generally substituted for Persian under the impression that it was the veruacular of Hindustan. As your honour is aware, the necessary reform was carried out in Behar in 1881, when it was ordered that the Proceedings of courts should be written exclusively in the Nagri or (Kaithi) character; [illegible] in [illegible] Central provinces also in the same year, w[illegible] were issued for the use of the Hindi lan[illegible]

character in the courts of law. And we humbly submit that the reasons which led to the change in those provinces, apply with equal force here.

3. The Sunder Dewany Adawlut, N. W. P. directing the substitution of the vernacular for Persian, laid down that pleadings and proceednigs should be recorded in clear intelligible Urdu or Hindi (where that dialect is current) The direction about the use of Hindi has been ignored. Orders have repeatedly been issued deprecating 'the unnecessary admixture of difficult Persian and Araibic words and phrases in the vernacular proceedings of courts, and enjoining the use of a style as near to the language of ordinary conversation as possilbe. But notwithstanding these orders, such words and phrases continue to be used in those proceedings to such an extent as to make them imperfectly intelligible to the vast majority of those who are vitally interested in them. The reason of this, we believe, lies, to a great extent, in the use of the Persian character for writing the vernacular. The use of the indigenous character, Nagri, will, we submit, exercise a salutary check upon this practice, and will lead eventually to the avoidance of all such Persian and Arabia words as have not become assimilated into the speech of the people.

4. The use of the Nagri character is further necessary in order that the object of substituting the vernacular for Persian, viz, to make it easy for the people to be able to read and comprehend the proceedings of courts may be carried out in its entirety. That object cannot be so carried out when the vernacular is written in a foreign character, which the mass of the people cannot be expected or induced to learn. Notwithstanding the fact that the Persian character has been in use in the courts of these provinces for several centuries, its knowledge is still confined to very small section of the populaton. The vast majority of those who sign and verify plaints and petitions

and legal documents written in the Persian character, are unable to read what is written in them, and when processes of courts are issued in that character, most of those to whom they are addressed are put to needless trouble and expense in finding out their contents.

5. Besides the fact of its being foreign and unfamiliar to the people, the inherent defects of the Persian character make it unsuited to be the medium of public business. As it is written in courts, it is, to use the words of Prof. Sir Monier Williams, a 'species of hopelessly difficult stenography'. It is not only difficult to decipher it but doubts and disputes often arise in courts of justice regarding the correct reading of words or phrases written in shikasta. It is impossible to say that all such cases are correctly decided, but assuming that they are, there can be no recompense for the trouble and expense to which honest people are subjected in establishing their claim or making good their defence, and no justification for the waste of public time and money caused by the proceedings of courts being recorded in such faulty characters. "In the absence of diacritical marks, and these are, as a rule, ommitted to a great extent in ordinary writing, two words which have not a letter in common, nor the slightest resemblance in sound, may have a precisely identical appearance on paper. For purposes of record, an alphabet of this character is obviously as bad a one as it is possible to conceive". (The Pioneer, July 10th, 1873). On the other hand, the Nagri character, being formed on the phonetic basis, is not only free from the defects mentioned above, but has been pronounced by eminent linguists to be 'the most perfect and symmetrical of all known alphabets,' when "it is once written, it is as clear as print, and so definite that a sentence expressed in it can be read with faultless pronunciation by a person who has not the remotest idea of its me[illegible] The [illegible]

foreign character, is in exclusive use in courts, and a knowledge of the vernacular language and character is consequently found to be useless in the transaction of public business, as is the case in the North Western Provinces & the Punjab, primary education has made very little progress among the people. It is thus that the North-Western Provinces, which were the pioneers of the policy of extending primary education amongst the masses, and of providing adequate fu ds by means of local rates, have come to be the most ig orant provinces in the Indian Empire. From 1870-71 to 1895-96, while the number of boys under instruction in primary schools have risen from 1,59,628 to 5,00,122 or 213 p. c. in Bombay from 68237 to 5,10,063 or 647 p. c. in Madras, from 68, 543 to 12,06,619 or 1,660 p. c. in Bengal, it has increased from 1, 53, 252 to 1, 55, 552, or 1. 5 p. c. only in the N. W.P. Since 1872, when the Government declared itself in favour of the use of the indigenous language and character in Behar, the number of boys in primary schools has increased there from 33, 430 to 2, 63, 471 or 679 p. c. In the Central Provinces, since 1881, the year in which the Nagri character was practically introduced into the courts there, the number has risen from 74, 529 to 1, 17,896 or 58 p. c.; while during the same period it has increased from 93, 660 to 1,09,852 or only 17 p. c. in the Punjab, though the population of the Punjab is nearly double that of the Ce tral Provinces, and the Government spends there twice as much per head of the population on education as in the latter provinces, and in the N. W. P. and Oudh, where the encouragement of Urdu and the consequent discouragement of Hindi have gone farther than anywhere else, the number of boys has fallen off by 49,000. It is still more important to note that in these very Provinces and under the same department of Public Instruction, primary education has been steadily adv[illegible] has made three times as much progress in [illegible]
Nagri character is in use in courts, as in [illegible]

where the business of courts is conducted exclusively throuh the Persian character. Phe truth is, Urdu, surcharged with Persian and Arabic words and written in Persian characters, is too difficult for the masses to acquire, and the time, trouble and expense necessary to enable a man to learn it, prove practically forbidding to almost all but those who are candidates for the public service or the profession of law.

8. The unsuitability of the Persian character as a medium of popular instruction, is, we submit, hardly open to dispute. As the late Professor Blochmann has observed, "a sentence in Urdu, Persian, Arabic, or Turkish, on account of the absence of vowel points, must first be understood before it can be read out aloud, and this is a great obstacle to elementary education, which can be only very partially overcome or lessened by introducing clear lithographs. To read a book in Persian characters is always more less a work, and but rarely a pleasure. "On the other hand, it is undeniable that the Nagri character is the best medium for such instruction. As Sir Erskine Perry has said," the perfection of a written character seems to be that it should convey through the eye an accurate idea of the pronunciation of each word, and this attribute is fully possessed by the devnagri in which Sanskrit is written and by all the best native alphabets.*** The value of this characteristic is tested by the fact that Hindu children are able to read directly they have learnt the value of each letter, so that an accomplishment for which years are often needed in Europe, is acquired in India in three months. But the exclusive encouragement of Urdu as the officially recognised vernacular, has made a knowledge of Hindi written in the Nagri character useless in nearly all that relates to public business, and has thus left the people with little stimulus to learn the only verna ular which they can be expected to learn. It is our firm belief that if the proceedings of civil, revenue and criminal courts, of municipal and District Boards and of other

public offices begin to be written in Nagri and their summonses, decrees and notices begin to issue in that character, the advantages of being able to read and write it will be very soon brought home to the minds of the people, and that this will give a great impulse to the progress ef education, and will lead them not only to avail themselves fully of the instructions provided by the state, but also to set up schools of their own and thus to e onomise and supplement the educational resources of Government.

9. We do not ask for any order regarding the language to be used in the proceedings of courts, as the orders which are already extant make it unnecessary to do so. All that we pray for, is,to use the words of the late Rev.Mr. Budden, that "the written character of the immense majority of the people should be used in the Government courts, and all summonses, decisions and decrees should be issued in that character. This need not exclude the use of Persian Uadu writing or English either, for similar purposes when necessary, nor would it necessitate the use of any other than the current, technical, and legal terms in which Government business is at present transacted. It merely means that the character in habitual use in the courts should be that of the people generally and not a foreign one; and that the language written in it should not be predominantly that of any one class of the people; that it should neither select nor reject terms simply because they are either of Hindu or Muhammadan affinity or origin; but take those which are the most generally and easily intelligible to the largest number of the people, and write them in the character which the majority understand."

10. It is deeply gratifying to us to know that Your Honour regards the extension of primary education conveyed in the vernacular and confined to sim[illegible] of knowledge as a duty which

ment, and we are thankful for the efforts which you have already made to promote it. It seems to be generally agreed now that primary education lies at the root of all other improvements, social, moral and economical, in the condition of the masses. And it is under a sense of the duty which, we believe, we owe to the Government and to the people in this connection, that we humbly beg to state it as our conviction that the adoption of the Nagri character as the medium of public business and of popular instruction, is absolutely essential to the success of mass education in these provinces. We think it unnecessary to take up Your Honour's time by dilating on the advantages of the change we have the honour to advocate, because, in the first place, you have yourself seen the beneficial effects of the substitution of the Nagri (Kaithi) character for the Persian in making the administration of justice popular and in stimulating the progress of vernacular education in Behar, and secondly, because the subject has been fully discussed in the note on "Court Character and Primary Education," which we beg to append to this memorial for Your Hononr's consideration.

11. We earnestly hope the matter will receive that attention from Your Honour which its importance demands, and that, after a full consideration of the subject, Your Honour will be graciously pleased to order that the Nagri character may be adopted for writing the vernacular pleadings and proceedings of courts and public offices in these Provinees.

And we will, as in duty bound, ever pray.

सभा की निधि और संपत्ति

पत्ति	सं १९९९ की बचत	सं. १९९९ का अधिक व्यय	स २००० से सं. २००९ तक की आय	जोड़
० नोट	८~)॥	×	६२९-)१०	६२७≡)४
ा० नोट	१९३२।-		१२१७=)॥	१४११०।≡)॥
७ स०				
ं.का शे	१०८७≡)॥		४५२८३-)७	५४३७०।~)१
० स०				
ा० नो०		२२७।=)१½	७८३६॥≡)	७६०९।)२½
से. स	४५३६≡)२½		६४२४८।।।=)२	६८७८५-)४½
	७३३॥-)।		२७५१)	३४८४।~)।
	२०३६≡)॥		४१४२≡)॥	६१६८।≡)
	१००५।-)		८६७≡)७	१८७२॥)७
	५००।≡)।		१७६९।)।।।	२२६९।।।)
		१४५।-।।।	८०८।।।-)	६६३।≡)।
स०			१०३१।-)	१०३१।~)
स०			१८४३।।।)५	१८४३।।।)५
० स०			४५२८।।।≡)॥	४५२८।।।≡)॥
	६१।।।)१०		७)५	६८।।।~)।
	३३।।≡)			३३।।≡)
नो.	९०।)१०	७४७३)५½	१६४४७।।-)५	१०६४।।।~)९
प्रा.नो.	८१९५≡)१०		१११४६६।।।≡ ॥	११९६३२≡)
		११४०।।।≡)३½	२८२२०।≡)	२७००७९।≡)८
		९१।।।-)८	१००९२।।।=)॥	१००८३)१०
व स.	११८९)		५७७७)	८७६६)
	७०५≡)		४२४८३।।=)४½	३३१८८।।।)~४
	४३३।≡)७		१०७०~)	१५०३।।)७
	१२८१)२		११५०३≡)१०	२०७८४।)
			७००)	७००)
			६३०७३।।।=)८	६३०७३।।।=)८
	३७२३।~)१	८०६≡)१	८५०१८०।)४½	८५३०९७।=)४½
		१९०२।।।-)½	१२९०६४१।~)११	
		२५७०९।।-)॥	२५७०९।।~)॥	
)	३५५१२।=)६½	३५५१२।=)६½	१३१६३५१≡)	

परिशिष्ट (ख) ४

प्रारंभ से सं० २००६ तक दाताओं की सूची जिन्होंने ५०० या इससे अधिक धन दिया।

भारत सरकार	५०००)	प्रकाशन
दिल्ली सरकार	५००)	हस्त लिखित हिंदी पुस्तकों की खोज
पंजाब सरकार	१५००)	,, ,, ,, ,,
मध्य प्रादेशिक सरकार	२०००)	१०००) पुस्तकालय, १०००) प्रकाशन
बिहार सरकार	१२५००)	कलाभवन
उत्तर प्रदेशीय शासन	२१३२२०)	८३६००) ह० हि० पु० की खोज
		२६४२०) पुस्तकालय
		१८२००) कलाभवन
		४७७००) प्रकाशन
		२३४००) भवन
		१६००) तिजोरी
		२५००) टंकण यंत्र
		६०००) राजकीय कोष
		५००) अर्द्ध शताब्दी
नगरपालिका, बनारस	१६९२०)	१५७२०) पुस्तकालय
		१२००) कलाभवन
डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, बनारस	५५०)	फुटकर
श्रीमान् महाराजा जयसिंह जू देव बहादुर, अलवर	६५००)	६०००) प्रकाशन
		५००) भवन
श्रीमान् महाराजा वीरसिंह जू देव बहादुर, ओड़छा	१०००)	पुस्तकालय
श्रीमान् महाराणा सर तुकोजी राव होल्कर तृतीय, इन्दौर	५००)	प्रकाशन
श्रीमान् महाराणा साहब भूपाल सिंह, बहादुर, उदयपुर	३०००)	२०००) फुटकर
		१०००) कलाभवन
श्रीमान् महाराजा सर प्रताप सिंह बहादुर, काश्मीर	२०५०)	१०५०) प्रकाशन
		१०००) फुटकर
श्रीमान् महाराजा प्रभुनारायण सिंह बहादुर, काशी	२०००)	१०००) भवन
		१०००) प्रकाशन
श्रीमान् महाराजा विभूतिनारायण सिंह जी, काशी	५५१)	श्री संपूर्णानंद अभिनंदन ग्रंथ
श्रीमान् महाराजा सर उम्मेद सिंह बहादुर, कोटा	२५००)	२०००) भवन
		५००) कलाभवन

श्रीमान् महाराजा सर माधव राव सिंधिया बहादुर, ग्वालियर	१०००)	प्रकाशन
श्रीमान् महाराजा सर विश्वनाथ सिंह जू देव बहादुर, छतरपुर	४०३०)	२०००) प्रकाशन १३००) भवन ५००) ह० हि० पु० की खोज २३०) फुटकर
श्रीमान् महाराजा सर नरेन्द्र शाह बहादुर, टेहरी-गढ़वाल	१०५००)	१००००) राजकीय कोश ५००) कलाभवन
श्रीमान् महाराजा साहब बहादुर डूंगरपुर	७५०)	६००) भवन १५०) फुटकर
श्रीमान् महाराजा साहब बहादुर, नेपाल	२०००)	भवन
श्रीमान् महाराजा सर सयाजीराव गायकवाड़ बहादुर, बड़ोदा	१०००)	भवन
श्रीमान् महाराजा सर गंगासिंह बहादुर, बीकानेर	२६००)	१६००) प्रकाशन १०००) भवन
श्रीमान् महाराजा श्री शार्दूलसिंह बीकानेर	१०००)	५००) कलाभवन ४००) अर्द्धशती १००) स्थायी कोष
श्रीमान् महाराजा सर भवानीसिंह जी बहादुर, भावनगर	१५००)	१०००) भवन ५००) प्रकाशन
श्रीमान् महाराजा सर वेंकटरमण सिंह जू देव बहादुर, रीवाँ	५६४९)	३४००) भवन १८००) प्रकाशन ४४९) फुटकर
श्रीमान् महाराजा सर उम्मेदसिंह बहादुर, शाहपुरा	१९९८४)	प्रकाशन, सूर्यकुमारी पुस्तक माला
श्रीमान् राजा सर रामसिंह जी बहादुर सीतामऊ	६००)	४००) प्रकाशन २००) भवन
श्रीमान् महाराजकुमार डा० रघुवीर सिंह जी, सीतामऊ	५०१)	१००) स्थायी कोष ४०१) नागरी प्रचार
श्रीमान् महाराजकुमार दिग्विजय सिंह जी, सैलाना स्टेट	१७५१)	कलाभवन
श्रीमान् राजा उदयप्रताप सिंह बहादुर, भिनगा	५६००)	३८००) प्रकाशन १७००) फुटकर १००) भवन

श्रीमान् राव नारायणसिंह रावसाहब मसूदा, अजमेर	५००)	१००) स्थायी कोष ४००) अर्द्धशती
श्रीमान् महाराज सर प्रतापनारायण सिंह, महामहोपाध्याय, अयोध्या	१०००)	भवन
श्रीमान् राजा बलवंत सिंह, आवागढ़	५००)	भवन
श्रीमान् राजा सर मोतीचंद, बनारस	८५०)	६००) फुटकर २५०) भवन
श्रीमान् राजा मुंशी माधोलाल, काशी	५१५)	भवन
श्री गो० ब्रजभूषण लाल जी महाराज कांकरोली	५००)	३००) अर्द्ध शताब्दी १००) पुस्तकालय १००) स्थायी कोष
श्रीमान् राजा सर रावणेश्वर प्रसाद सिंह, गिद्धौर	५००)	प्रकाशन
रा० ब० राजा ब्रजनारायण सिंह पडरौना, गोरखपुर	५००)	१००) स्थायी कोष ४००) अर्द्धशताब्दी
श्री गोस्वामी दामोदर लाल जी, नाथद्वारा, मेवाड़	१०००)	भवन
श्रीमान् राजा कमलानंद सिंह पूर्णिया	२०००)	भवन
श्री कुमार तारानंद सिंह बी० ए० पूर्णियां	५०१)	१००) स्थायी १००) पुस्तकालय ३०१) अद्‌र्ध शताब्दी
श्रीमान् निमिराज महाराज सर विजय चंद्र महताब बहादुर, बद्‌र्धवान	३६००)	२०००) भवन १५००) प्रकाशन १००) फुटकर
श्री० महाराज सर पटेश्वरी प्रसाद सिंह, बलरामपुर	१०००)	५००) कलाभवन ३००) अद्‌र्ध शताब्दी १००) स्थायी कोष १००) पुस्तकालय
श्री कुंवर राजेन्द्र सिंह, सीतापुर	१२००)	१०००) प्रकाशन २००) भवन
श्री राजा बहादुर डा० सूरजबख्श सिंह, सीतापुर	५००)	अद्‌र्ध शताब्दी
श्री राजा पन्नालाल बंशीलाल हैदराबाद	५००)	१००) स्थायी कोष ४००) सूरसागर
बिड़ला ब्रदर्स, कलकत्ता	५००)	कुंभनिधि सत्यज्ञान निकेतन

दाता	कुल	विवरण
श्री सेठ कृष्णकुमार बिड़ला, कलकत्ता	५७००)	४०००) कलाभवन १०००) हिंदी सेवक मडल ५००) अर्द्धशताब्दी १००) स्थायी कोप १००) पुस्तकालय
श्री सेठ घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता	२०२८०॥≋)॥	१८१५१) कलाभवन १४००) अर्द्ध शताब्दी १००) स्थायी कोप ५७६॥≋)॥ फुटकर ५०) हिंदी स० लिपि २०२८०॥≋)॥
श्री सेठ जुगुलकिशोर बिडला, कलकत्ता	२१००)	कलाभवन १००) कुंभ निधि सत्यज्ञान निकेतन
श्री० राजा बलदेवदास बिडला, काशी	१८२५)	१०००) पुरस्कार ५००) भवन ३२५) फुटकर
श्री सेठ व्रजमोहन बिडला, कलकत्ता	१०००)	५००) सत्यज्ञान निकेतन ३७०) हि० सं० लिपि १३०) स्थायी कोप
श्री सेठ माधोप्रसाद बिडला, कलकत्ता	६००)	कोप
श्री सेठ लक्ष्मीनिवास बिडला, कलकत्ता	१०५९५)	७६४५) कलाभवन १०००) हिंदी सेवक मडल (स० ज्ञा० नि०) १०००) ह० हिंदी पुस्तको की खोज ५००) हिंदी १००) स्थायी कोप २५०) नागरी प्रचार १००) पुस्तकालय १०५९५)
श्री सेठ अमरचंद जी, जालौन	५००)	कलाभवन
श्री सेठ आनदीलाल जी पोद्दार, कलकत्ता	५०१)	२५०) कलाभवन १०१) स्थायी कोप १५०) सत्यज्ञान निकेतन, कुंभ निधि

डालमिया जैन ट्रस्ट, शाहाबाद	५००)	कलाभवन
श्री डा० सर तेजबहादुर सप्रू, प्रयाग	२२००)	२२००) भवन
		१००) कलाभवन
श्री सेठ दाऊदयाल जी कोठारी बीकानेर	५०१)	१०१) स्थायी कोष
		१००) पुस्तकालय
		१००) राजस्थानी
		२००) सत्यज्ञान निकेतन
श्री दीपचंद किशनलाल पोद्दार काशी	८००)	२५०) कलाभवन
		१००) स्थायी कोष
		३००) पुस्तकालय
		१५०)·अर्द्धशती
श्री मुंशी देवीप्रसाद मुंसिफ जोधपुर	१२२५०)	प्रकाशन—मुंशी देवीप्रसाद ऐ० पुस्तकमाला
श्री सेठ द्वारकादासजी, बम्बई	५००)	१००) स्थायी कोष
		४००) अर्द्धशती
श्री नंदलाल भुवालका, काशी	७५१)	५००) हिन्दीसेवक मण्डल
		२५१) श्री भारतेन्दु जंनशती
श्री नंदलाल भुवालका, कलकत्ता	७०१)	२०१) स्थायी कोष
		१००) भवन
		४००) सत्यज्ञान निकेतन, अतिथिशाला
श्री नारायणदासजी, बीकानेर	५०१)	१००) पुस्तकालय
		४०१) सत्यज्ञान निकेतन कुंभनिधि
श्री सेठ नारायणदास बाजोरिया	१२३२)	२०१) पुरस्कार
		५०१) सत्यज्ञान निकेतन, अतिथिशाला
		१०१) स्थायी कोष
		३०१) अर्द्धशती
		१००) पुस्तकालय
		१२८) सत्यज्ञान निकेतन
श्री एन० एन० पंडित, राजकोट	२२५०)	भवन
श्री सर पद्मपत सिंहानिया, कानपुर	६९००)	४०००) अर्द्धशती
		१००) स्थायी कोष
		१०००) कलाभवन
		१८००) अनुशीलन-छात्रवृत्ति
श्री प्यारेलाल गर्ग, कानपुर	१०००)	प्रकाशन
श्री पुरुषोत्तमदास हलवासिया कलकत्ता	१०५०)	४५०) कूप की मरम्मत
		६००) कलाभवन

श्री पुरुषोत्तमलाल जेतली, प्रयाग	५०१)	१०१) स्थायी कोष ४००) सत्यज्ञान निकेतन
श्री पूर्णचंद वर्मन, कलकत्ता	२१०२)	२००२) कलाभवन १००) स्थायी कोष
श्री कुंवर फतहलाल मेहता, उदयपुर	५००)	४००) कलाभवन १००) स्थायी कोष
श्री राय बहादुर बाबू वटुकप्रसाद खत्री काशी	१०००)	पुरस्कार
श्री सर बदरीदास गोयनका, कलकत्ता	१००१)	४०१) फुटकर १००) स्थायी कोष ५००) कलाभवन
श्री बदरीदास डागा, बीकानेर	५०१)	१०१) स्थायी कोष २००) राजस्थानी सा० र० नि० २००) सत्यज्ञान निकेतन
श्री बंशीधर जालान, कलकत्ता	५००)	४००) फुटकर १००) स्थायी कोष
श्री व्रजरत्नदास वकील, काशी	३७५)	१००) पदक १००) प्रकाशन १००) स्थायी कोष ७५) फुटकर (पुस्तकें ५३१।) अंकित मूल्य की)
श्री बांकेबिहारी सेठ, कानपुर	५००)	सत्यज्ञान निकेतन
श्री बाबूलाल राजगढ़िया, कलकत्ता	१०५१)	१००१) प्रकाशन (नवभारतीय ग्रंथमाला) ५०) फुटकर
श्री बारहट बालाबक्षजी, जयपुर	७०००)	प्रकाशन बालाबक्ष रा० चा० पु० मा०
श्री बृजलाल खेमका, काशी	५०१)	१०१) स्थायी कोष ४००) सत्यज्ञान निकेतन (कुंभनिधि)
श्री बैजनाथजी रूरिया, बम्बई	५००)	१००) स्थायी कोष ४००) अर्द्धशती
श्री सेठ भंवरलाल रामपुरिया, बीकानेर	५०१)	२००) सत्यज्ञान निकेतन २००) राजस्थानी सा० र० नि० १०१) स्थायी कोष
श्री भगीरथ कनोडिया, कलकत्ता	१३५१)	११५१) कलाभवन २००) अर्द्धशती
श्री भूपेन्द्रकुमारजी, काशी	५०१)	कलाभवन

श्री मंगतूराम जैपुरिया, कलकत्ता	७५२)	५०१)	साधारण
		१५१)	फुटकर
		१००)	स्थायी कोष
श्रीमती मनीबाई शाह	५००)		कलाभवन
श्री मनोहरदास मैरामल, बम्बई	५००)	१००)	स्थायी कोष
		४००)	अर्द्ध शती
श्री आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी रायबरेली	१२००)	१०००)	पदक
		२००)	फुटकर
सेठ माणिकचन्द डागा, बीकानेर	५०१)	१०१)	स्थायी
		४००)	सत्यज्ञान निकेतन
श्री मुरारीलाल केडिया, काशी	१०१३॥=)	५००)	भवन
		५०)	मूर्ति मंदिर, कलाभवन
		२५)	रामप्रसाद समादर कोष
		३८७॥=)	ग्रिफिथ शिलारोपण
		५१)	भारतेन्दु जन्मशती
श्री मूलचन्द अग्रवाल, कलकत्ता	११५०)	१००)	स्थायी
		२००)	अर्द्ध शती
		२५०)	सत्यज्ञान निकेतन, कुंभनिधि
		४५०)	कलाभवन
		१५०)	फुटकर
श्री सेठ मूलचन्द मीमानी, बीकानेर	५०१)	१०१)	स्थायी कोष
		२००)	राजस्थानी
		२००)	सत्यज्ञान निकेतन
श्री मोहनलाल जालान, कलकत्ता	५०१)		राजस्थानी सा० र० निधि
श्री रत्नचंद कालिया, कानपुर	६००)	१००)	स्थायी कोष
		५००)	अर्द्ध शती
श्री सेठ गोविंददास सेकसरिया, बंबई	१०००)	१००)	स्थायी कोष
		९००)	अर्द्धशती
श्री गौरीशंकर गोयनका, काशी	१३००)	११००)	राजकीय कोश
		१०८)	स्थायी कोप
		१००)	पुस्तकालय
घनश्यायदास पोद्दार, बंबई	७५१)	५००)	अर्द्धशती
		१५०)	अर्द्धशती
		१०१)	स्थायी कोप

श्री रतनदेवी डागा, बीकानेर	५०१)	१०१) स्थायी कोष
		१००) पुस्तकालय
		३००) सत्यज्ञान निकेतन, कुंभ निधि
श्रीमती रमादेवी जैन, डालमिया	६००)	५००) अर्द्ध शती
		१००) स्थायी कोष
श्री राय राधारमण, इलाहाबाद	५००)	भवन
श्री राधाकृष्ण मोहता, बीकानेर	५०१)	१००) स्थायी कोष
		१००) पुस्तकालय
		५०) सत्यज्ञान, निकेतन कुंभ निधि
		२५०) हाता सुधार
श्री सेठ राधाकृष्ण चमड़िया, कलकत्ता	५०१)	१००) स्थायी कोष
		४०१) अर्द्ध शती
श्री रामकुमार केजरीवाल कलकत्ता	१०००)+२५०)	१००) स्थायी कोष
		५००) अर्द्ध शती
		४००) कोश
		२५०) भारतेंदु जयन्ती
श्री सेठ रामकृष्ण डालमिया डालमिया नगर, बिहार	८१६)	१०१) स्थायी कोष
		७१५) पुस्तकालय
श्री रामचन्द्र जी, कानपुर	१०००)	१००) स्थायी कोष
		९००) फुटकर
श्री रामदहिन मिश्र, बाकीपुर	७२४)	१००) स्थायी कोष
		३९९) सत्यज्ञान निकेतन
		१००) फुटकर
		१२५) कला भवन
श्री रामदुलारी दूबे	१७२०१)	१५०००) सत्यज्ञान निकेतन
		२०००) प्रकाशन
		१००) स्थायी कोष
		१०१) अर्द्धशती
श्री सेठ रामदेव चोखानी, कलकत्ता	१४२५।≡)	१०१) स्थायी कोष
		१००) नागरी प्रचार
		२००) भूषण पदक
		२५१) अर्द्धशती
		२४) फुटकर
		२५) कलाभवन
		२८४।≡) राजस्थानी सा० नं० [illegible]

		१००) पुस्तकालय
		२५०) सत्यज्ञान निकेतन कुंभनिधि
श्री सेठ रामदेव जी पोद्दार, बंबई	१०००)	१००) स्थायी कोष
		९००) अद्‌र्धशती
श्री सेठ रामनाथ डागा, बीकानेर	५०१)	१०१) स्थायी कोष
		१००) पुस्तकालय
		३००) अद्‌र्धकुंभी
श्री पं० रामनारायण मिश्र, काशी	१४००)	१२००) पुरस्कार
		१००) पदक
		१००) भवन
श्री रामभरोसे सेठ, कानपुर	५०१)+१००)	५०१) सत्यज्ञान निकेतन
		१००) स्थायी कोष
श्री रामरत्न गुप्त, कानपुर	२००३)	१२०१) कला भवन
		६०२) अद्‌र्धशती
		१००) स्थायी कोष
		१००) पुस्तकालय
श्री सेठ रामरिखदास परसराम पुरिया, बंबई	५००)	१००) स्थायी कोष
		४००) अद्‌र्धशती
श्री सेठ रामरिख जी केडिया, बंबई	५००)	१००) स्थायी कोष
		४००) अद्‌र्धशती
श्री रामविलास पोद्दार स्मारक समिति, बंबई		४००) प्रकाशन रामविलास पोद्दार स्मारक ग्रंथ १६४८।।।) की पुस्तकें
श्री रा०ब०रामेश्वरप्रसाद बागला, कानपुर	१०००)	१००) स्थायी कोष
		९००) फुटकर
श्री लालचन्दजी सेठी रा० ब०, उज्जैन	१०१)+५०१)	१०१) स्थायी कोष
		१००) पुस्तकालय
		४०१) अर्द्ध शती
श्री विनयकृष्ण रोहतगी, कलकत्ता	५०१)	२५०) सत्यज्ञान निकेतन, कुंभनिधि
		१५१) फुटकर
		१००) स्थायी कोष
श्री विशुद्धानन्द, हरद्वार	५०१)	सत्यज्ञान निकेतन
श्री सेठ विश्वम्भरलालजी, बम्बई	५००)	१००) स्थायी
		४००) अर्द्धशती

श्री विष्णुदास वासिल, नयी दिल्ली	६००)	१००) स्थायी कोप ५००) अर्द्धशती
श्री वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद्, ओड़छा	१०००)	प्रकाशन देवपुरस्कार ग्रथ
श्री सेठ शातिप्रसाद जैन, डालमिया	२५००)	१०१) स्थायी कोप १८९९) सत्यज्ञान निकेतन ५००) कलाभवन
श्री शातिप्रसाद जैन, कलकत्ता	१०००)	हिंदी सेवक मण्डल
श्री राय शिवप्रसाद राय शभुप्रसाद, काशी	२०००)	भवन
श्री शुकदेव पाडेय, पिलानी	११००)	१००) स्थायी कोप १०००) माधवी देवी महिला पुरस्कार
श्री श्रीप्रकाश, काशी	५२५)	२००) कलाभवन २५) रामप्रसाद समादर कोप १००) अर्द्धशती १००) श्री सपूर्णानद अ० ग्रंथ १००) पुस्तकालय
श्री स्वामी सत्यदेवजी, हरद्वार		२५००) भूमि, सत्यज्ञान निकेतन ३७८२।।) की पुस्तकें
श्री सत्येन्द्रकुमार, काशी	५००)	१००) स्थायी कोप ४००) अर्द्धशती
श्री सेठ सनेहीरामजी भुवालका, बम्बई	५००)	१००) स्थायी कोप ४००) अर्द्धशती
श्री सौ० सरस्वती देवी, डालमिया	१०००)	कलाभवन
श्री सीताराम सेकसरिया, कलकत्ता	६००)	१००) स्थायी कोप २५०) कलाभवन २५०) सत्यज्ञान निकेतन, कुभनिधि
श्री डा० सर सुंदरलाल, ८१६ प्रयाग	१५००)	१०००) प्रकाशन ५००) भवन
श्री सूरजमल नागरमल, कलकत्ता	१०००)	८००) अर्द्धशती १००) पुस्तकालय १००) स्थायी कोप
श्री लाला सेवकरामजी नागलिया ऋषिकेष, देहरादून	५०१)	१०१) स्थायी कोप ४००) सत्यज्ञान निकेतन
श्री सोहनलाल सत्ता, लाहौर	१०००)	१००) स्थायी कोप ९००) सत्यज्ञान निकेतन

स्वदेशी काटन मिल्स	१००१)	श्री संपूर्णानंद अ० ग्रं० भवन
श्री रा० ब० हर प्रसाद, पीलीभीत	५००)	
श्री सर हरगोविंद मिश्र, कानपुर	५००)	श्री संपूर्णानंद अ० ग्रंथ
श्री हरिकेशव घोष, इलाहाबाद	१७५०)	१०००) श्याम निधि
		२००) कलाभवन
		५००) भवन
		५०) रामप्रसाद स्मा० नि०
श्री हीरानन्द शास्त्री, बड़ौदा	१००)	स्थायी कोष (१०१२ पुस्तकें)
श्री रा० ब० डा० हीरालाल कटनी	११००)	१०००) पदक
		१००) प्रकाशन
श्री हीरालाल चौधरी काशी	५००)	१००) स्थायी कोष
		४००) सत्यज्ञान निकेतन

परिशिष्ट (ग)—१

१. पुस्तकालय के संग्रह तथा दुर्लभ हस्तलिखित ग्रंथ

१ हिंदी	२१७१४	२ संस्कृत	७९०	३ बंगला	२०७
४ मराठी	१२४	५ गुजराती	२९८	६ गुरमुखी	३७
७ उर्दू	१२२	८ अंगरेजी	६२५	९ अनुशीलन	११४
१० नेपाली	३४	११ रूसी	१४	१२ थामिल आदि	१[illegible]

आर्य भाषा पुस्तकालय में ६ विशिष्ट संग्रह हैं—

सभा संग्रह—जिसमें १३ भाषाओं की २८००० के आस पास पुस्तकें हैं

शेष संग्रहों में

संग्रह— ४३१८

२ द्विवेदी संग्रह १०६६

३ डा० हीरानंद शास्त्री संग्रह ११८४

४ रत्नाकर संग्रह ११७९

५ याज्ञिक संग्रह १०७३ पु[illegible]

६ श्रीशचंद्र शर्मा संग्रह

इस प्रकार इस समय पुस्तकालय में ३६००० के लगभग पुस्तकें हैं।

परिशिष्ट (ग)—२

२ः

सभा के दुर्लभ हस्तलिखित ग्रंथ

१ पृथ्वीराज रासो, महोबा खंड	चंदबरदाई	१७४७ वि०
२ बीसलदेव रासो	नरपतनाल्ह	१६६६ वि०
३ मधुमालती—३ अ.	चतुर्भुजदास	
४ खुम्मान रासो		
५ प्रबोधचंद्रोदय नाटक		
६ बिहारी सतसई		१६९१ वि०
७ इंद्रावत	नूरमुहम्मद	
८ अखरावट	मलिकमुहम्मद जायसी	
९ पुहुपावती	दुखहरन	१७२६ वि०
१० मुक्तिरत्नाकर		१७५५ वि०
११ वाराणसी विलास		१८०७ वि०
१२ नानक प्रकाश		
१३ रस रतन	पुहकर	
१४ रसराज	मतिराम	
१५ भक्तबछल	मलूकदास	१८८७ वि०
१६ कामरूप का किस्सा		
१७ मदालसा ख्यान		
१८ करुणाभरण नाटक	लछिराम	
१९ चित्रविलास	अमृत कवि	१७८४ वि०
२० जहाँगीर चंद्रिका	केशवदास	१६६६ वि०
२१ पर्थनारायण	चतुरराय	
२२ रसपीयूषनिधि	सोमनाथ	
२३ रामचंद्रिका	केशवदास	१८३८ वि०
२४ योगवासिष्ठसार	कवींद्राचार सरस्वती	१७१४ वि०
२५ भक्तमाल प्रियादास टीक		१७६९ वि०
२६ सूरसागर	सूरदास	१९००
२७ जयसिंह प्रकाश		१७७१
२८ आलमके कवित्त		
२९ गोरखनाथ की वाणी		लि० वि० १८५५ वि
३० हंसनादोपनिषद्		
३१ कबीर परिचयी	अनंतदास	
३२ माधवानल कामकंदला	आलम	
३३ इंद्रावत और महामनि (प्राणनाथ)		
३४ ककहरा	यारी साहब	

३५ रसचंद्रिका	इस्वी खां	
३६ कणेरीपा की सबदी		१८५५ वि
३७ कबीर वाणी		
३८ ,,	,,	१५६१
३९ बीजक	कबीर साहब	
४० रस कल्लोल	करन कवि	
४१ कविप्रिया	केशवदास	
४२ रसिक प्रिया	केशवदास	१८२६ वि०
४३ खुदाबख्श का बारहमास	खुदाबख्श	
४४ गोपीचंद चरित्र	पेमदास	१७९८ वि०
४५ श्रीपति रामायण	गुरुदयाल	१८९८ वि०
४६ रस प्रबोध	गुलामनबी रसलीन	१७९८
४७ सहस्रनाम	गुलाल साहब	
४८ गोपीचंद की सबदी	गोपीचंद	१८५५
४९ गोरखनाथ की बाणी	गोरख	१८५५
५० हमीर हठ	ग्वाल	१८८० वि०
५१ चैनदासजी के सबद	चैनदास	१७९८
५२ जगजीवन दासजी बाणी	जगजीवनदास	१६१३ वि०
५३ चित्रमीमांसा	जगत सिंह	
५४ अनन्य सार	जतनलाल गोसाँई	१८७४ वि०
५५ जलंधरी पाव की सबदी	जलंधर नाथ	१८५५ वि०
५६ समर सार	तुरसी दास	१८५६ वि०
५७ ज्ञान दीपक	दरिया साहब	१८३०
५८ मुक्तिरत्नाकर	दलेल सिंह	१७५५ वि०
५९ दादू दयाल की बानी	दादूदयाल	१८०६
६० अष्टयाम	देवकवि	१८७७ वि०
६१ शब्दरसायन	,,	
६२ कल्प पच्चीसी	दयानतराय	१७८४ वि०
६३ उधव प्रसंग	धरनी दास	
६४ रसमुक्तावली	ध्रुवदासहित	१८३४
६५ लोहे सोने का बाहु	नरहरि महापात्र	
६६ रास रसलता (२३ ग्रंथों के साथ)	नागरी दास	
६७ नाथ पद मंजरी	नाथ कवि	
६८ नामदेवजी के पद	नामदेव	
६९ जगद्विनोद	पद्माकर	१७९७ वि०
७० बखनाजी की बाणी	बखना	

७१ बिहारी सतसई (जुल्फकार खा की कु)	जुल्फकार खाँ	[illegible]
७२ रसराज	मतिराम	
७३ भक्तबछावली	मलूकदास	
७४ अजनासुदरी की चउपई	मुनिलाल	१६०८ [illegible]
७५ रज्जब जी के कवित्त	रज्जबजी	१७९७ [illegible]
७६ आनद लहरी	रतन कवि	
७७ नेमनाथजी का मगल	लाल	१८६१ वि०
७८ सुदर शृगार	सुदर कवि	१६८८ वि०
७९ बयालिस लीला	ध्रुवदास	
८० पुहुप प्रकाश	देवेश्वर माथुर	
८१ रस रहस्य	कुलपति मिश्र	
८२ रूपविलास	रूपसाह	१८१३ वि०
८३ स्वरोदय	चरणदास	
८४ कलि चरित्र	रमई पाठक के पुत्र बाणकवि	१६७८ वि०
८५ दस्तूर मालिका	फतहसिंह	१८८० वि०
८६ दोहासार सग्रह	दारा शाह	१७१० वि०
८७ नलपुराण	सेवाराम	१८९३ वि०
८८ बाजनामा		१८९०
८९ बूढा रासो	चदपरतिप (?)	१८३२ वि०
९० भाषाभूषण	जसवत सिंह	१८१७ वि०
९१ मतिराम सतसई	मतिराम	
९२ मुक्ति विलास	वाहिद कवि	
९३ रसचद्रिका	उजियारे कवि	
९४ रसचद्रोदय	उदयनाथ	
९५ विरहविलास	रसनायक	१८७२
९६ सदैवच्छ सावलिया की बात	सूरसेन	
९७ समयसार नाटक	बनारसी	
९८ जेहली जवाहर	प्राणनाथ साती	
९९ अमृतधारा	भगवानदास निरजनी	
१०० कवित्त रत्नाकर	सेनापति	
१०१ श्यामसगाई	नददास	

परिशिष्ट (घ)

सभा के विशिष्ट प्रकाशन

१ भक्त नामावली
२ अकबरी दरबार ३ भागों में
३ मआसिरुलउमरा या मुगल दरबार ४ भागों में
४ हुमायूँ नामा
५ भारतेंदु-ग्रंथावली भाग १, २, ३
६ चित्रावली
७ तुलसी ग्रंथावली भाग २, ३
८ कबीर ग्रंथावली
९ जायसी ग्रंथावली
१० कीर्तिलता (प्रेस में)
११ सूरसागर आठ संख्याएँ (सेट)
१२ सूरसागर संपूर्ण सस्ता संस्करण (दो भागों में)
१३ हम्मीर रासो
१४ बुद्धचरित
१५ ढोला मारू रा दूहा
१६ बाँकीदास ग्रंथावली, तीन भागों में
१७ व्रजनिधि ग्रंथावली
१८ रघुनाथ रूपक
१९ राजरूपक
२० पृथ्वीराज रासो (पूर्ण सेट २२ संख्या में)
२१ बीसलदेव रासो
२२ हिम्मत बहादुर विरुदावली
२३ अन्योक्ति कल्पद्रुम
२४ रामचरितमानस
२५ नंददास ग्रंथावली
२६ श्रीनिवास ग्रंथावली प्रेस में
२७ अशोक की धर्मलिपियाँ
२८ अंधकार युगीन भारत
२९ मोहेंजोधड़ो प्रेस में
३० यूनान का इतिहास
३१ राज्यप्रबंध शिक्षा
३२ भारतीय वास्तुकला
३३ भारतीय मूर्तिकला
३४ खारवेल प्रशस्ति
३५ मुहणोत नैणसी की ख्यात २ भागों में
३६ हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का ५० वर्षों का विवरण
३७ हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का विवरण
३८ हिंदी हस्तलिखित ग्रंथों का त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण
३९ हिंदी साहित्य का इतिहास
४० रसमीमांसा
४१ द्विवेदी अभिनंद ग्रंथ
४२ श्रीसंपूर्णानद अभिनंदन ग्रंथ
४३ भागवत संप्रदाय
४४ हिंदी शब्दसागर खंड, १, २, ४, ५,
४५ संक्षिप्त हिंदी शब्दसागर
४६ कृषि शब्दावली
४७ रूपनिघंटु, दो भागों में,
४८ संक्षिप्त हिंदी व्याकरण
५० हिंदी रसगंगाधर
५१ ज्ञानदीपक
५२ राधाकृष्ण ग्रंथावली

परिशिष्ट (ङ)

सभा द्वारा दिये गये पुरस्कार

अब तक की सभा द्वारा पुरस्कृत पुस्तकों की सूची लेखक, पुरस्कार और पदकों के नाम सहित संवत् क्रम से निम्नलिखित है :—

संवत् १९७६ प्राचीन लिपिमाला (श्री गौरीशंकर हीराचंद. ओझा) जोधसिंह पुरस्कार, गुलेरी पदक और राधाकृष्णदास पदक

१९७९ भारतवर्ष के प्राचीन राजवंश (श्री विश्वेश्वरनाथ रेऊ) जोधसिंह पुरस्कार, गुलेरी पदक और राधाकृष्णदास पदक

१९८० हमारे शरीर की रचना (डाक्टर त्रिलोकीनाथ) डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार, ग्रीव्स पदक और रेडिचे पदक

१९८१ बुद्धचरित (पं० रामचंद्र शुक्ल) रत्नाकर पुरस्कार, राधाकृष्णदास पदक

१९८३ अजातशत्रु (श्री जयशंकर प्रसाद) बटुक प्रसाद पुरस्कार सुधाकर पदक

१९८४ गंगावतरण (श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर') रत्नाकर (१) पुरस्कार, राधाकृष्णदास पदक

१९८५ (१) कायाकल्प (श्री प्रेमचंद) बटुकप्रसाद पुरस्कार, सुधाकर पदक (२) मौर्य साम्राज्य का इतिहास (श्री सत्यकेतु विद्यालंकार) जोधसिंह पुरस्कार, गुलेरी पदक और राधाकृष्णदास

१९८६ (१) मानव शरीर रहस्य (डाक्टर मुकुंदस्वरूप वर्मा) डाक्टर [illegible] पुरस्कार और ग्रीव्स पदक ३) काव्य में रहस्यवाद (पं० [illegible] द्विवेदी स्वर्ण पदक

१९८७ हिंदी भाषा और साहित्य (श्री श्यामसुंदरदास [illegible]

१९८८ (१) गढ़ कुंडार (श्री वृंदावनलाल वर्मा) बटुकप्रसाद [illegible] पदक

(२) बुद्धचर्या (श्री राहुल सांकृत्यायन) जोधसिंह [illegible] और राधाकृष्णदास पदक

(३) मातृभूमि और उसके निवासी (श्री [illegible] स्वर्ण पदक

१९८९ (१) सौर परिवार (डाक्टर [illegible] ग्रीव्स पदक और [illegible]

(२) गुंजन ([illegible]

१९९१ (१) शिक्षा मनोविज्ञान ([illegible] पुरस्कार, रेडिचे पदक

(२) तितली (श्री जयशंकर प्रसाद) बटुकप्रसाद पुरस्कार, सुधाकर पदक
(३) आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास (श्री कृष्णशंकर शुक्ल) द्विवेदी स्वर्णपदक

१९९२ (१) प्रतापचरित (श्री बारहट केसरीसिंह) रत्नाकर बलदेवदास पदक
(२) नूरजहाँ (श्री गुरुभक्त सिंह) 'रत्नाकर' (२) पुरस्कार, बलदेवदास पदक
(३) क्षयरोग (डाक्टर शंकरलाल गुप्त) डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार और ग्रीव्स पदक
(४) संक्षिप्त शल्य विज्ञान (डाक्टर मुकुंदस्वरूप वर्मा) डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार, ग्रीव्स पदक
(५) भाषा रहस्य (श्री पद्मनारायण आचार्य) द्विवेदी स्वर्णपदक

१९९७ (१) बाल मनोविज्ञान (श्री लालजीराम शुक्ल) बलदेवदास बिड़ला पुरस्कार रेडिचेपदक
(२) भारत की चित्रकला (श्री राय कृष्णदास) द्विवेदी स्वर्णपदक

१९९८ नारी (श्री सियारामशरण गुप्त) बटुकप्रसाद पुरस्कार, सुधाकर पदक

२००१ (१) दैत्यवंश (श्री हरदयालु सिंह , रत्नाकर पुरस्कार (१) राधाकृष्णदास पदक
(२) बादली (श्री चंद्रसिंह) रत्नाकर पुरस्कार (२) बलदेवदास पदक
(३) सूर्य सिद्धांत (श्री महावीरप्रसाद श्रीवास्तव) डा० छन्नूलाल पुरस्कार, ग्रीव्ज पदक
(४) वाङ्मय विमर्श (श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र) द्विवेदी स्वर्णपदक

२००२ (१) भारतीय दर्शन (श्री बलदेव उपाध्याय बिड़ला पुरस्कार, रेडिचे पदक
(२) गणेश श्री संपूर्णानंद) डा० हीरालाल स्वर्णपदक
(३) स्मृति रेखाएँ (श्री महादेवी वर्मा) द्विवेदी स्वर्णपदक
(४) चीन और च्यांग (श्री कमलापति त्रिपाठी) द्विवेदी स्वर्णपदक

२००४ (१) घनआनंद और आनंदघन (श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र) रत्नाकर पुर कार (१) राधाकृष्णदास पदक
(२) शेखर एक जीवनी भाग २ . श्री अज्ञेय) बटुकप्रसाद पुरस्कार, सुधाकर पदक
(३) जौहर (श्री श्यामनारायण पांडेय) द्विवेदी स्वर्णपदक

२००७ (१) स्वप्न दर्शन (श्री राजाराम शास्त्री) बिड़ला पुरस्कार, रेडिचे पदक
(२) अचल मेरा कोई (श्री वृंदावनलाल वर्मा) बटुकप्रसाद पुरस्कार (यह पुरस्कार सहृदय लेखक ने असम के भूकंप-पीड़ितों के लिये उत्सर्ग कर दिया) सुधाकर पदक
(३) राजस्थानी भाषा (श्री डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या) रत्नाकर पुरस्कार (२) बलदेवदास पदक

(४) प्राचीन भारतीय शासन पद्धति (श्री डा० अनंत सदाशिव अल-
तेकर) जोधसिंह पुरस्कार, गुलेरी पदक

(५) कुरुक्षेत्र (श्री रामधारी सिंह 'दिनकर') द्विवेदी स्वर्णपदक

(६) बाणभट्ट की आत्मकथा (श्री डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी) द्विवेदी -
स्वर्णपदक

(७) आत्मकथा (देशरत्न डा० राजेंद्रप्रसाद जी (द्विवेदी स्वर्णपदक)

सभा द्वारा प्रदत्त अन्य पुरस्कार तथा पदक

भैरवप्रसाद पुरस्कार सं० २००२ श्री चंद्रभानु यादव
२००३ श्री प्यारेलाल
२.०४ श्री रामप्रसाद फटारा
२०*५ श्री भृगुनाथ सहाय

पुञ्जरत पदक स० २००४ श्री चंद्रकांत
२००५ श्री रामकुमार
२००६ श्री स्वर्णलता नागपाल
२००७ श्री जयनारायण रस्तोगी
२००८ श्री शकुंतला मल्लिक

हीरक जयंती के अवसर पर दिये गये पुरस्कार

१ रत्नाकर पुरस्कार : १ . स० २००३।०९ तक की रचनाओं पर . पर : 'व्रज लोक संस्कृति' व्रज की लोक कहानियों पर डा० सत्येन्द्र को २०० रु० का पुरस्कार तथा साथ में श्री राधाकृष्णदास रजत पदक ।

१. बिड़ला पुरस्कार : स० २००४।०९ की रचनाओं पर : 'मनोविज्ञान और जीवन' पर श्री लालजी राम शुक्ल, काशी को २०० रु० का पुरस्कार और साथ में रेडिचे रजत पदक ।

३. रत्नाकर पुरस्कार : २ : : स० २००४।०७ : तक की रचनाओं पर : 'भोजपुरी लोक गीत' पर श्रीकृष्णदेव उपाध्याय को २०० रु० का पुरस्कार और साथ में श्री बलदेव-दास रजत पमक ।

४. डा० छन्नूलाल पुरस्कार स० २००१।०४ की रचनाओं पर 'औपसर्गिक रोग' पर श्री डा० घाणेकर को २०० रु० का पुरस्कार और साथ में श्री ग्रीब्ज रजत पदक ।

५. डा० छन्नू लाल पुरस्कार . स० स० ५।०८ तक की रचनाओं पर : 'धातु विज्ञान' पर श्री डा० दयास्वरूप को २०० रु० का पुरस्कार और साथ में श्री ग्रीब्ज रजत पदक ।

६. मेहता जोधसिंह पुरस्कार : स० २००६।०९ तक की रचनाओं पर : 'भारतीय 'व्यापार का इतिहास' पर श्री कृष्णदत्त वाजपेयी को २०० रु० का पुरस्कार, साथ में श्री गुलेरी रजत पदक ।